भूमिका

—०—

मैं लेखक न होने पर भी भारतीयो के हित की चिंता से प्रेरित होकर अपने खयालात लिखने को मजबूर हुआ हूँ। मेरी इस पुस्तिका से आज कल के अधिकांश लोग नाक भौं सिकोड़ेंगे, परन्तु मुझ इसकी परवाह नहीं। मैं न्याय पर हूँ। मुझे विश्वास है एक दिन आधुनिक चकाचौंध में फँसे लोगो की बुद्धि भी ठिकाने आयेगी। इसमें कुछ समय लग सकता है।

अगर मेरी बात झट व्यवहार में आने लायक नही तो धीरे २ ही सही। पर शान्ति का मार्ग तो यही है। मै बागी नहीं हूँ, मेरे हिये में देश प्रेम ह, फरमावरदारी ह। इसलिये मैंने जो कुछ लिखना था लिख दिया, जिसे चाहे जनता स्वीकार करे या न करे।

मियानी
११-१-५०

—महात्मा शम्भूदयाल गौड

प्रकाशकीय

मुझे यह पुस्तिका प्रकाशित करते हुए अत्यन्त हर्ष है। परमहंस महात्मा शम्भूदयालजी गौड के सुलझे हुए विचारों का तनिक सा आभास आपको इससे प्राप्त होगा। इन विचारों पर आप मनोयोग पूर्वक सोचेंगे तो आप, मैं समझता हूँ अवश्यमेव प्रभावित होंगे तथा इस पुस्तिका का प्रचार इस समय के लिए आपको उचित जँचेगा।

महात्माजी भारतीय संस्कृति के प्रेमी और उद्भट विद्वान पुरुष हैं। उनकी वाणी का यह पहला पुष्प 'संस्कृति और सिविलिजशन" आपकी सेवा में प्रस्तुत है। आप इसे स्वीकार करें और इससे कुछ सीखें महात्माजी की यही इच्छा है। महात्माजी अपनी वाणी के और-और पुष्प भी हमें देंगे वे भी यथा समय प्रकाशित होंगे। मैं महात्माजी को उनकी इस कृति के लिए अनेक धन्यवाद देता हूँ।

अंत में मैं हिन्दी संसार के लोकप्रिय सुलेखक और सुकवि एवं "प्रभाकर", 'आवाज' आदि अनेक पत्रों के भूतपूर्व सम्पादक श्री श्रीगोपाल विनमणि' का आभार मानता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तिका के प्रकाशन में, इसको संशोधित और सम्पादित करके मुझे सहयोग दिया है।

कलकत्ता
१ ३ ५०

--मथुराप्रसाद गुप्ता।

॥ ॐ ॥

संस्कृति और सिविलिजेशन

—— ०० ——

माता संस्कृति और महारानी सिविलिजेशन

संस्कृति

एक ऐसे धाम में, जहा चाद सूर्य की पहुच नही है और वह इन्द्रियातीत है, अनुत्तमभू चेतन भगवान ही अकेले शयन करते हैं। वह धाम निर्मल जल से परिपूरित सीमाविहीन समुद्र है। जैसे किसी जगह मुद्दत तक पानी के इकट्ठे रहने से उसमें स्वय ही कच्छ, मच्छ पैदा हो जाते है, ऐसे ही समुद्र में से एक कामिनी पैदा हो गई। वह कामिनी अपने रज से प्रभु के चेतन शरीर को मढकर धाम से बाहर निकल पडी। अपना नाम प्रकृति बता कर उसने त्रिलोकी का निर्माण किया। पृथ्वी लोक में ७ द्वीप ९ खड भी बसाये। उनमें से एक खड 'भारत' है।

प्रकृति ने अपनी प्राकृतिक बुद्धि, स्वाभाविक प्रेम और अनन्य सुन्दरता से भारत (भरतखड) को अत्यन्त सुन्दर बनाया। इस भारतखण्ड में पुरुषार्थी और ब्रह्मवेत्ता पैदा होते आये हैं। ब्रह्मवेत्ताओं ने पिता राम और माता प्रकृति के प्रेम से जो सरस्वती (नीति) बनाई, उसका नाम माता संस्कृति है। संस्कृति की मदद से ज्ञानी और ज्ञानियो की मदद से संस्कृति ने जीवन पाया। मुख्य चार

वश इस देश में बसते थे। आपस में इनका बडा प्रेम-आदर एक दूसरे से था। राजा दशरथ के यहा भी एक लडका पदा हुआ, जिसन इस सस्कृति को बडी तन्दुरुस्ती दी। उसको भी राम का खिताब मिल गया था। इस देश में परमात्मा को भी राम कहते हैं।

देश में उन दिनो त्यागी, परोपकारी, सयमी और भक्त की इज्जत राजा से भी ज्यादा थी। इस लिये हर मनुष्य इन चारों में से किसी एक में अपन को शुमार करने में बडप्पन समझता था।

पतन

परस्पर की कुर्बानी से जब देश पूर्ण सम्पन्न हो गया तो कामना ने पदार्थों में निगाह दौडाई। अहकार भी आ बिराजा इन्द्रियो का स्वाद बढने लगा। एश लूटन को आपस में ३३ करोड देवता छीना-झपटी करने लग। देवताओ से असुर हो गये। अपन अपन बुजुर्गों क हव बतान का पुरुषार्थ ही बस करन लग। आपस की ईर्ष्या से विदेशियो से प्रम जा किया। उन्होन इनको चूसा और आपस में अधिक लडा दिया और गुलाम कर लिया।

स्वराज्य मिल गया

गुलामी में समय क प्रभाव न पलटा खाया। त्याग उपकार, प्रम इन्द्रिय दमन को लेकर कुछ लोग फिर खडे हुए। बहुत लोगो न जलें भुगतीं बहुत लोगो न प्राण भी दिये। फिर एक एसा महात्मा भी निकला जिसमें ही यह चारों गुण थ, और एक ऐसा भी गुण था कि जिसकी ठडक से बारूदी गरम लोहे को काट फेंकना आसान मालूम हुआ। उसक इशारे

पर शाति का समुद्र उमड पडा और क्रोधाग्नि बुझ गयी। दुशमनो के जलते हिये ठडे होकर बह गये। देश स्वतत्र हो गया; पर फिर साम्प्रदायिक नशे में चूर कृतघ्नों ने, ईर्ष्यालुओ ने सिर फिराये, लूटमार की, खून बहे; लेकिन महात्मा की टोपीवाली पलटन ने सबर के घूट पीकर, जहर और मार को गुरु के उपदेश और आयदा की भलाई के लिए हजम कर लिया।

गुलामी से छुटी सस्कृति का हाल

माता सस्कृति मानो मियादी बुखार से मुद्दत के बाद उठी है। मुद्दत का मल दूर हो गया है, नया खून नहीं बन पाया है। सब अग (जिगर-फेंफडे) कमजोर हैं। पाच बडे सुपूत माता की जिन्दगी बच जाने से भगवान के आभारी हैं। बाकी आगे पीछे की न समझनेवाले, माता की हालत को न जाननेवाले मूर्ख, माता जिदा है—देखकर स्तनो को चूसते हैं। सुपूत कहते हैं, "अरे भाइयो! जरा ठहरो तो, तन्दुरुस्ती तो आने दो। कुछ दिन में ही माता के खूब दूध उतर आयेगा।" पर वे नही मानते। मुखिया सुपूत दूध का राशन बाध रहे हैं। ३३ करोड भाइयो की जानो पर प्रेम से हिफाजत की निगाह रखते हैं। माता को तन्दुरुस्त करने के साधन (विधान) जोड रहे हैं। लेकिन मूर्ख भीतर बाहर की समझे बिना स्वराज्य के फल खाने को तैयार हैं।

कामी तो नगे होकर चाहे जिसके ऊपर मूतने को, लोभी मनमानी झूठी सफाई से स्वार्थ साधन को, क्रोधी कमजोर को लूटने

मारने की, ईर्ष्यालु बदला लेने की भावना से आजादी का स्वागत कर रहे हैं। स्वराज्य के खेत में वे मेहनत नहीं करना चाहते। बिना लगे ही फल खाना चाहते हैं और कर्म ये करते हैं कि अपने २ बुजुर्गों के हुक्मों की फेहरिस्त बनाना, राम को गोता बरसाने के लिये उछल २ कर, पुकारना, हाथों के घड़ी बांध कर बाईसिकलों पर बैठकर सिनेमा में जाना, पुरुषों के भजनों की महफिल जोड़ना और उनको सुना २ कर ज्ञानी बनना, सट्टे–दड़े में धन खोजना, साधुओं की करामातों में बहस करना, जाति-गोत्र के नाम से बड़े बनना, मरे हुओं के जुलूस निकालना, रूठना, हड़ताल करना, गैरों की वेश भूषा में मोर बनना, अपने देश और धर्म के देवता को छोड़कर दूसरे देश और धर्म के देवता को पूजना, अपनी गलती न देखना और भगवान को भी गलती छांट देना।

जिन देश प्रेमियों ने देश को आजादी तक पहुचाया, उनके लिए दूर देश के चाल ढग समझने अनवार्य थे ही। बेचारो ने सीखा। जिनसे उस वक्त कुछ भी न हो सका था, वे आज इन प्रेमियों को बजाय धन्यवाद देने के, गैर वेश भूषा धारण करने का ताना देते है, हालाकि इन्होंने छोड भी दी हैं। बेचारे देश प्रेमी बिना विदेशियों को नफरत दिखाये खुद ही आहिस्ता २ खद्दर पहनकर अपनी गंगा (सस्कृति) में गोता लगा रहे हैं।

मंदिर के एक कौने से दूसरे कौने में सरकने को पाप समझनेवाले, भाइयों को नीच बनानेवाले लोग इन देश प्रेमियों को भी शूद्र कहते नहीं शरमाते। ये गाय मारनेवालों को चाहते हैं, पर रजकों को नालायक

कहत हैं। विनाशकाले विपरीत बुद्धि हो जाती है। लेकिन धन्य है प्रेमी माता को जो अपने बच्चे को बुखार में कुनन देती है और उसके रोने को और हाथ के दात गडाने को प्रेम से सहती है।

विधान

सस्कृति माता खद्दर की साडी बाध मूज क पीढे पर बैठी है। बडे बेटे की बहू 'युक्ति' पैर दबा रही है। बेटा 'त्यागी' आज्ञा सुनने को हाथ बाधे खडा है। बेटा 'प्रेम' गर्द गुब्बार जमाने को सब स्थानो पर छिडकाव कररहा है। बेटा 'उपकार' आये गये लोगो की ठीक २ बिना शोर व गुल सुश्रूषा कर रहा है। बेटा "क्षेत्रपाल" खान पान की पूछने को खडा है। बेटा 'इन्द्रियजीत' गदा और तीर-तर्कष लिये एक घुटने पर रक्षा के लिए बैठा है। ३३ करोड बेटे पोतो की माता प्रफुल्लित हिये से हुकुम कर रही है। सब बेटे पोतो की राय से पाच पच विधान बनाने को चुने गये हैं। त्यागी प्रधान है, प्रेम गृह-मत्री है, उपकार क्षेत्रपाल, और इन्द्रियजीत सब मिलकर पाच पच है। चाहे जैसे काम के मुताबिक बडा छोटा बनने में मान-अपमान, दु ख-सुख से नहीं हिचकते। विधान बन रहा है, माता सभापति पद पर है। राम ऊपर से आशीर्वाद दे रहा है।

नई दुनिया से पचायत को तार मिला है। सिविलिजेशन महारानी ने त्यागी प्रधान को बुलाने की विनती की है। सबकी सलाह से त्यागी विदा होता है।

सिविलिजेशन की नई दुनिया

सोने के पहाड पर आलीशान सौ सौ मजिल के महल है। जडाऊ सिंहासन पर हीरो से तुलनेवाली महारानी बैठी है। पांचों तत्त्व सेवा में

हाथ बाध खड़ है। कभी २ रानी मात २ मील ऊपर को सैर करता है। कभी सिनमा की खिडकियों को बंध करके लम्प बुझा करके सुख के लिए कल्पना करती है। चिन्ताओं को हटाने के लिए दुश्मन का सर्वस्व भस्म करने के लिए नये नये अस्त्र शस्त्र इकटठे कर रख है। रिश्तेदार और सतानें हाथों के धडों बांध बिना आराम किये एग व आराम देने वाले उपाय खोज रहे हैं। फिर भी बडी मोटी महारानी सिविलिजेशन अत्यंत बेचैन है। त्यागी बुलाया गया है।

त्यागी का नई दुनिया में पहुचना। टोपी में से शांति की खुशबू का फैलना। त्यागी का खूब सम्मान होना—ये नयी दुनिया की बातें है।

अब चर्चा चलती हैं—

सिविलिजेशन— मिस्टर लाल! आप की खुशबू से मुझे शान्ति मिलती है। मैं आप से दोस्ताना व्यवहार चाहती हूँ। मुझे सेवा बतलाओ।

त्यागी—'आपका मशकूर हूँ। जरूर हम परस्पर का सौदा करेंगे, लेकिन मैं आसरा किसी का भी न लूगा क्योंकि अपनी मदद आप किये बिना हममें बल नहीं आयगा। हमारा देश सबका मित्र है। हम किसी एक थोक के होकर भी नहीं रहेंगे।

सिवि०— महात्माजी का तो यह सिद्धात था कि हम किसी को मारेंगे नहीं और आप फौज सभाल रहे है।

त्यागी— उनका मतलब था कुटिलता नहीं करेंगे। बचावके लिए तो कमजोर एक रिजाई भी छडनवाले को लाजाने के लिए, मुह फाडती

हैं। रक्षा करना तो दैवी नियम है। दया के कारण हमने दुश्मन साप को भी दूध पिलाया, और एकता का गुण न समझकर आपस की ईर्ष्या से गुलाम हुए। विदेशियों ने जब हमको ज्यादा २ लडाया और चूसा तो समझते २ सब लोग सभल गये। प्रेम में एकत्र सिर्फ महात्मा के इशारे से ही प्रेम द्वारा बिल्लियो के निर्दयी हृदयो को पिघला दिया गया, वे भाग गईं। हमको पिछले दु ख याद हैं। प्रेम-एकता के गुण समझकर देश एक स्वर में है। बिल्लियो के स्वभाव को हम समझते हैं। बस फौज से इतना ही मतलब है कि हमारा दूध बिल्लिया फिर न पियें।"

सिवि०-"तदुरस्ती की बातें तो आप हमसे ही लेंगे और सीखेंगे।"

त्यागी-"आप में तो रोग भरा है, हमको क्या तदुरुस्ती देओगी और क्या सिखाओगी ? हमारी सस्कृति माता बडी युक्ति से चलती है। युक्ति विना सुख नहीं है। माता अभी फंद से छुटी है, इसीलिये आपको जख्मी और दुबली मालूम पडती है। हम अपनी माता की सेवा करके तन्दुरुस्त होंगे, तब कान्ति और मुस्कान देखना।"

सिवि०-"मेरा रोग बताइये। बेशक मै मोटी होकर भी दु खी हू शान्ति नहीं है।"

त्यागी-"इन्द्रियजनित विषयो में जो स्वाद है वह तो रोग को बढाने वाला है। आप तो नाशवान वस्तुओं को इकट्ठा करके अमर तन्दुरुस्ती की छाती को दबा रही है। दूसरे लोग उन चीजो के बिना भूखे मरते हैं। यह आपका पाप ही आपको कुदरत से नहीं मिलने देता। आप अगरक्षकोंसे रक्षित है, कुरसी पर अधर है, चिकों से आखें बद करती है, नौकरों के सेवित रहती है। पाप का साप तो आपकी आस्तीन (मन) में

है। जब तक मन (हिये) के कपाट नहीं खुलेंगे, यह साप नहीं जायगा; इसलिये फालतू सामान मन (हिये) पर मत लादिए।"

सिवि०—"मैं तो मन-बुद्धि को ईजाद करके फैला रहो हूँ।"

त्यागी—"जैसे प्याज में गुठली नहीं मिलती, और हैजे की प्यास नहीं बुझती, आप अपनी छाया के पीछे भाग रही हैं, जिससे कोई लाभ नहीं। यह कामना का रोग है। आपकी इतनी कोशिशें अब मरने-मारने के ढेलो पर आ उतरी हैं। आपसे तो जानवर भी अच्छा जो घास खाकर धरती पर सूर्य और हवा की शरण में पडा हुआ आकाश के सिनेमा को देख २ कर हस रहा है। आपकी तो दशा उस कीडे जैसी है जो किसी पत्ते पर बैठा हुआ बवडर के साथ में आकाश पर चढ जाय और वहा वह अहकार में बालू रेत के कणो को गिनना शुरु करदे। कीडा क्या जाने कि उसकी ससार के समय के मुकाबिले में कितनी तुच्छ आयु है और ससार में कितनी तरह के पत्ते हैं उनमें से मैं एक पर ही तो बैठा हू। अनेको पत्तो के साथ कितने बवडर खेल करते हैं। उनकी भी सूरतें स्थिर नहीं हैं। ऐसी स्थिति में कीडा दुनिया के ईजादो से समझना चाहे तो हसी ही आती है।

यह सब दिखाईदेनेवाली चमक आतिशबाजी के फूल हैं। हाथ जल जायेंगे, गुलदस्ता नहीं बनेगा। पूर्व का पहाड पश्चिम में रख देना कुदरत से दुश्मनी करना है। कुदरत की खूबसूरती को प्राकृतिक नियमो में ही रह कर देखिए तब असलियत दीखँ पडेगी। मेरा एक भाई मेरी माता का आज्ञाकारी नगे बदनवाला थोथे बास की पोरी में आलाप गया है कि—

मम योनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥ १४ का ३
इतना बडा आनंदमय उद्गार तुम्हारी ईजादें नहीं पा सकतीं ।"

सिवि०-"बेशक भारत गुरु देश है और यही दुनिया को शान्ति दे सकता है । आप की पंचायत ने आपको बुलाने के लिए तार दिया है । मैं भी साथ चलकर आपके देश की मेहमान बनकर शान्ति का सबक लूंगी ।"

(दोनों का भारतवर्ष में आना)

देश-पंचायत का इजलास

अछूतोद्धार बिल

माता संस्कृति-"क्यों रे लाल ! यह ऊंच जातियां क्यों हो हल्ला मचा रही हैं ?"

त्यागी-"माता जी ! भाई २ में नफरत तो हमसे नहीं देखी जाती । हमने अछूत उद्धार का बिल पास किया है, तिसपर ही यह शोरगुल है ।"

संस्कृति-"बेटा प्रेम ! तुम समझाओ"

प्रेम-"माता मैंने तो बहुत पुचकारा, लेकिन नहीं मानते; मेरा विश्वास नहीं करते, उन्हें तो राम पिता ही समझायेंगे ।"

राम-"क्योंरे छोकरो ! कैसा शोरगुल यह है ? तुमको क्या दुःख है ?"

उच्च वर्ण-"प्रभो ! आप दया क्यों नहीं करते, जब उच्चवर्ण इतने दुःखी हैं ? आजकल हम अपनी पवित्रता नहीं रख सकते ।"

है। जब तक मन (हियें) के कपाट नहीं खुलेंगे, यह ताप नहीं जायगा, इसलिये फालतू सामान मन (हियें) पर मत लादिए।"

सिवि०—"मैं तो मन-बुद्धि को ईजाद करके फैला रही हू।"

त्यागी—"जैसे प्याज में गुठली नही मिलती, और हंजे की प्यास नहीं बुझती, आप अपनी छाया के पीछे भाग रही है, जिससे कोई लाभ नहीं। यह कामना का रोग है। आपकी इतनी कोशिशें अब मरने-मारने के ढेलो पर आ उतरी है। आपसे तो जानवर भी अच्छा जो घास खाकर धरती पर सूर्य और हवा की शरण में पडा हुआ आकाश के सिनेमा को देख २ कर हस रहा है। आपकी तो दशा उस कीडे जैसी है जो किसी पत्ते पर बैठा हुआ बवडर के साथ में आकाश पर चढ जाय और वहा वह अहकार में बालू रेत के कणो को गिनना शुरू करदे। कीडा क्या जाने कि उसकी ससार के समय के मुकाबिले में कितनी तुच्छ आयु है और ससार में कितनी तरह के पत्ते है उनमें से मैं एक पर ही तो बैठा हू। अनेको पत्तो के साथ कितने बवडर खेल करते है। उनकी भी सूरतें स्थिर नहीं हैं। ऐसी स्थिति में कीडा दुनिया के ईजादो से समझना चाहे तो हसी ही आती है।

यह सब दिखाईदेनेवाली चमक आतिशबाजी के फूल हैं। हाथ जल जायेंगे, गुलदस्ता नही बनेगा। पूर्व का पहाड पश्चिम में रख देना कुदरत से दुश्मनी करना है। कुदरत की खूबसूरती को प्राकृतिक नियमो में ही रह कर देखिए तब असलियत दीखें पडेगी। मेरा एक भाई मेरी माता का आज्ञाकारी नगे बदनवाला थोथे बांस की पोरी में आलाप गया है कि—

राम–"जिनमें दया और उपकार नहीं होते उनको मैं ही तो सिकुडते रहने की बुद्धि देता हूं। तुम मूर्खों को यह नहीं मालूम कि दोनो का निर्माता मैं ही हू। तुम्हारे समान ही उनका शरीर भी हाड मास का बना है। तुम ऊचे इसीलिये हो कि वे तुम्हारी गुलामी करते हैं और करते हैं वह काम जिसको तुम नीचा समझते हो। उनकी यह शराफत है। क्या आमाशय में रहनेवाला मल तुमको स्वर्ग से नहीं पतित करता?

मैं दुष्ट का दुश्मन हू, चाहे दुष्ट से मेरा सबंध दादा या मामा या गुरु अर्थात् भीष्म या कस या द्रोण जैसे भी हो उसको मैं खत्म कर देता हूं।

स्त्री के रज और मर्द के वीर्य को तो तुम गदा मानते ही हो, जो मेरी मशीन पर चढ़कर बच्चे बन जाते हैं; तुम्हीं उनके मुंह चाटते फिरते हो। क्या ये लोग मेरी मशीन पर चढे हुए जानधारी नहीं हैं?"

उ० प्र०–"नीच की सगति से मनुष्य नीच बन जाता है।"

राम–"ऊंचे वे मनुष्य हैं जिनके विचार सात्विक और दिल ऊंचे हैं। ऐसे लोग विशुद्ध हृदय, शील स्वभाव, सच्चरित्र, परोपकारी, निरभिमानी, स्थिर चित्त, सदय और अनासक्त होते हैं।"

नीच वे हैं जिनके तामसिक विचार और दिल संकुचित हैं। ये लोग मलिन हृदय, दुर्विनीत, दुश्चरित्र, पेटू, घमंडी, अस्थिर चित्त, निर्दय विषयासक्त और मूर्ख होते हैं। इन्हीं गुणो से अपने नीच या ऊच होने की जांच तुम कर सकते हो।

तुम इनसे आन्तरिक भावों को क्यों नहीं मिलाते सिर्फ बाह्य रूपरेखा मिलान करते हो, जो तुम्हारी ही बनायी हुई है। तुम भाइयों को

राम–'देशक मुग बेगुनाह पर दया आती है। तुम तो तनिक दुःख से ही बिलबिला उठे। पर वे नगे-भूखे भी तो मेरी ही औलाद हैं, जो तुम्हारे कारण ही दुःखी हैं। क्या उनकी सहायता न करूं?"

उ० व०–"भगवन! ब्राह्मण तो आपके मुख रूप हैं, वे अपवित्र हो जायेंगे।"

राम–"ब्राह्मण कभी भ्रष्ट नहीं होते, वे तो औरों को पवित्र करनेवाले होते हैं। अगर वे भ्रष्ट होते हैं तो आदर्शहीन हैं।

अगर क्षत्री ढाल की तरह सबकी रक्षा नहीं करता है तो वह क्षत्रपति नहीं है।

अगर वैश्य साम की तरह बाहर से जीवन तत्त्व खींचकर अगों का पूरा २ पोषण नहीं करता और फालतू तत्त्वों को अच्छे से नहीं बदल सकता तो ओछा है, उसे वैश्य कहलाने का अधिकार नहीं है।

शूद्र को ऐसा होना चाहिए जैसा, प्रेम। प्रेम सेवा करता है, अभिमान नहीं रखता।

मैंने सवरी के बेर, भूख से व्याकुल होकर नहीं खाये थे, प्रेम से खाये थे। मैं क्षत्रीपन को भूला हुआ नहीं था। मैं तो बेकसों का सेवक हूँ। मेरी औलाद को मेरे दर्शन क्यों नहीं करने देते? कुटिलों का मैं भला नहीं करूंगा, मेरी मूर्ति तोड़नेवालों से तो तुमसे लड़ा नहीं गया, आज मुझे अपनाते हो! स्वार्थ में इन्हीं से मुह में थुक्वा लेते हो। मुझसे तुम्हारे अंतर्भाव छिपे नहीं हैं।'

उ० व०–"प्रभो! सब जानो हम तो छुआछूत के मारे सिकुड़ २ कर चलते हैं।"

तेरी ही स्त्री अनुसूया थी, जो पतिके सिवा ब्रह्मा, विष्णु और शिव को भी बेटा बनाती थी ? क्या मेरी और सताना को तूने मेम और साहब समझा है, जो तलाक कानून बनाता है ? अभी दो वर्ष पहले याद कर, जौहर में जिन्दा जलनेवाली और पति के साथ जलनेवाली सतियों को । पर पुरुष का मुह न दिखाने के लिए ही ९० स्त्रिया एक कूए में शिशुओ सहित कूदी थीं । मेरी औलाद नहीं चाहतीं सगाई की परख में ही औलाद हो जाय और आरजी शादियो में मुस्तकिल घर ही न बसे । एसे कानून ही ठीक हो सकते हैं, जिनसे एक बार का किया हुआ संबध उम्र भर कायम रहे और अनुशासन भग न हो ।"

त्यागी—"माता ! मर्द तो कई ब्याह ६० वर्ष की उम्र तक कर लेता है और वेश्या गमन भी करता है । एक मर जाने पर दूसरा ब्याह कर लेता है, क्योंकि स्त्रिया सिर्फ ४ फेरो की गुनाहगार है । क्या धर्म ये कानून सिफ उन्हीं के लिये बने हैं ?'

संस्कृति—"बेशक तुम्हारा कहना ठीक है । फिर एसे कानून बनाओ कि शादी में मर्द और स्त्री की उम्र का ५ वर्ष से ज्यादा का फर्क न हो और दोनो बालिग हों । एक मर्द से ज्यादा मर्द और एक स्त्री से ज्यादा स्त्री कोई नहीं रख । विधुर विधवा से ही शादी करे, कन्या से नहीं, और विधवा विधुर से ही ।"

त्यागी—'बिना गोत्र और जाति देखे शादी कर सकते है ?"

संस्कृति—"यों तो सब इनसान एक ही नस्ल के है, लेकिन इस बात का कुछ और ही उद्देश्य है । ऐसा करने से मर्द को प्रमेह प्रदर रोग हो जायेंग । लोग सयम से न रह सकेंग । ——

मारनेवाले, पशुओ को मारनेवाला से भी ज्यादा पापी हो। दुनिया औरों की दोस्ती ढूंढती है। तुम सतयुग से साथ आये भाइयो को ठुकराते हो। क्या ये चूहे खानेवाली बिल्ली और गौ-भक्षकों से भी बुरे है, जिनका जूठा दूध तुम पीते हो और उन्हें ऊंचा बैठाते हो? चमार शब्द से अगर नफरत है तब "रामलाल" शब्द से तो प्यार होना चाहिए। "गोडसन' और "दुदायन्श" के नाम तो तुम्हारी नजरो में प्योर (pure) और पाक है। तुमने मेरा नाम क्यो सडा दिया? मेरे नाम से तो पत्थर भी तिरते थे। तुलसी और गगाजल पवित्र करते थे। क्या वे सब नपुसको व हाथ में आने से वेकार हो गये? दिवाला मत निकालो; वहम छोडो। तुम मिलकर सब ३३ करोड देवता हो, तुममें कोई नीच नही है।"

उ० व०—"जय हो! जय हो! अछूतोद्धार बिल पास करो, हमें मजूर है।"

हिन्दू कोड बिल

सरस्वती—"प्रिय त्यागी! तू नई दुनिया में तो निष्काम कर्म की बडाई मार आया और मुझे तू सकामकर्म का प्याला पिलाता है! मै तो बेटा! प्रेम और निष्काम कर्म के कारण ही दुश्मनो के हजारों धक्को से भी नहीं मरी। मैल छूटने से तो तू कहता है कि दुबली हो गई और खुद मर्दस्थान, नारीस्थान, भाई स्थान और बहनस्थान छाटना चाहता है! तू इतना बडा त्यागी अपनी मृत भार्या की स्मृति में परदेश में भी फूल चढाना नहीं भूलता! उसके प्रेम में से दूसरी औरत को अल्पांश भी नहीं देना चाहता! तू ही एक शिव है, जो मरी हुई पार्वती को कधे पर लिये फिरता है?

री ही स्त्रीअनुसूया थी, जो पतिके सिवायब्रह्मा, विष्णु और शिव को भी टा बनाती थी ? क्या मेरी और सतानो को तूने मेम और साहब समझा ,, जो तलाक कानून बनाता है ? अभी दो वर्ष पहले याद कर, जौहर में जिन्दा जलनेवाली और पति के साथ जलनेवाली सतियो को । पर पुरुष को मुह न दिखानें के लिएही ९० स्त्रियां एक कूए में शिशुओ सहित क्दी थीं । मेरी औलाद नहीं चाहतीं सगाई की परख में ही औलाद हो जाय और आरजी शादियो में मुस्तकिल घर ही न बसे । ऐसे कानून ही ठीक हो सकते है, जिनसे एक बार का किया हुआ सबध उम भर कायम रहे और अनुशासन भग न हो।"

त्यागी–"माता ! मर्द तो कई ब्याह ६० वर्ष की उम् तक कर लेता है और वेश्या गमन भी करता है । एक मर जाने पर दूसरा ब्याह कर लेता है, क्योंकि स्त्रियां सिर्फ ४ फेरो की गुनाहगार हैं । क्या धर्म के कानून सिर्फ उन्हीं के लिये बने है ?"

सस्कृति–"बेशक तुम्हारा कहना ठीक हैं । फिर ऐसे कानून बनाओ कि शादी में मर्द और स्त्री की उम् का ५ वर्ष से. ज्यादा का फर्क न हो और दोनो बालिग हो । एक मर्द से ज्यादा मर्द और एक स्त्री से ज्यादा स्त्री कोई नही रखे । विधुर विधवा से ही शादी करे, कन्या से नहीं, और विधवा विधुर से ही।"

त्यागी–"विना गोत्र और जाति देखे शादी कर सकते हैं ?"

सस्कृति–"यो तो सब इनसान एक ही नस्ल के हैं, लेकिन इस बात का कुछ और ही उद्देश्य हैं । ऐसा करने से मर्द को प्रमेह और स्त्री को प्रदर रोग हो जायेंगे । लोग सयम से न रह सकेंगे । उनका मन हर

काम वासना की पूर्ति की चिन्ता में रहेगा। जानवरो म कामवासना का उदय समय पर होता ह लेकिन इनशान में यह १२ महीन और २४ घट रहती ह। इसीलिए तो वासना क गुप्तागो को धोती और साडी में ढक्ते ह। वरना यह भी तो कुदरती अग ही ह। फिर अनक नातो जसे पडोसी नौकर, साथी गुरु वगरह सबको ही अपनी जसी बहन माताऔर बटी समझी जाती ह। शादी करन में भी गोत्र शासन बडी छानबीन से देख जाने ह कि कहीं किसी नाते से बहन भाई तो नहीं ब्याहे जा रहे ह। सिवाय एक ब्याहता के उम भर सब देश की स्त्री पवित्र भाव से देखी जाती ह। पवित्र सकल्प का बधन सिफ ब्याहता के साथ ही नहीं रहता। इस तरह देश को वीयवान और चरित्रवान बनाया जाता था। समय पर एक पत्नीवती ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता हो जाता था।

त्यागी– आजकल तो बडा दुराचार ह।

सस्कृति– मुन (सस्कृति को) न मानन से दूर देशो की नक्ल करन से दुराचार फलता ह। दुराचारी पाप से डरता हुआ भी छिपकर पाप करता ह। मेरा बधन न होता तो पथिवी पर न्याय नाम की कोई चीज ही नहीं रह जाती।

त्यागी बहन को बाप के घर म भाई के बराबर हिस्सा क्यो न मिले?

सस्कृति– लडकी घर म तो नहीं रहती दूसरो के लिए ही उसे तो पाला जाता ह। वह वहा पति के घर की मालिकिन हो जाती ह। बाप की सेवा तो बुढापे म बटा ही करता ह। ब्याह गौना छूछक भात भट और तिलक इत्यादि देन की बातो से लडकी का पिता के घर में अस्तित्व रहेगा परन्तु जायदाद देन से लडकी का कोई हिस्सा घर में नहीं रह

सकता। प्रेम जलन के रूप में और फंसले उलझन के रूप में बदल जायेंगे। परस्पर का विश्वास जाता रहेगा। मर्द और स्त्री को तो कुदरत ने भी बराबर नहीं बनाया। पुरुष और स्त्री में उतना ही भेद है, जितना सूर्य और चाद में, ईश्वर और माया में। एक active है, दूसरा passive है। एक भोक्ता है और दूसरा भोग्य है।

तत्वदर्शियों ने जाना है कि सिवा ईश्वर के दूसरी वस्तु ससार में नहीं है; माया झूठी है। इसको वासना ने रचा है। माया का प्रबल होना पुरुष को क्षीण करता है। पुरुष वीर्य देता है, स्त्री लेती है। बेशक माया (स्त्री) माता है। इसमें वीर्य का अस्तित्व नहीं होना, प्राप्त वीर्य की यह रक्षा करती है और उसे सन्तान के रूप में उपस्थित करती है। इस तरह प्रजा फैलती है। इसकी देह के अणु भी मर्द से बारीक और कोमल होते हैं। इसके उभरे स्तन, मोटे जघनस्थान, रजस्राव और गर्भाधान की स्थिति इसे पुरुषों जैसे काम करने की इजाजत नहीं देते।

हमारे यहां मर्दों पर और बच्चों पर औरतें बलिहारी रहती है। नारी के काम में मर्द को और मर्द के काम में नारी को लगा देना ठीक नहीं।"

त्यागी -- "हमारे यहा स्त्री को पाव की जूती समझते हैं।"

संस्कृति-- "यह गलत है, हिन्दुस्तान जैसा आदर कहीं नहीं है। मै अपनी बिगडी हुई हालत का वर्णन नहीं करती हू; मैं लडकियो को मारनेवाले और बेचनेवाले दुष्टो का भी जिक्र नहीं करती हू। मै तो उस अपने यौवन काल का जिक्र करती हूँ जबकि एक गरीब लडकी अपनी रक्षा के लिये, एक पोंहुची (धागा) एक राजपूत के पास भेजती है तो वह थाली छोडकर उसकी रक्षा के लिये दिल्ली सम्राट से भी लडने में नहीं हिचकता है। वह रक्षा न कर सकने पर लडकी से पहले मरता है।

हमारे यहा लडकी ब्याहे जाने के समय से पहले देवी है। लडकी की शान पीहर में हाथ जोडना नहीं है। पीहर में किसी की धोती धोना और पलग बिछाना उसका अपमान है। देवी के पूजन में लडकिया पूजी जाती है। लडके की मौत पर लोग अपने स्वार्थवश रोते है, लेकिन क्वारी लडकी के मर जाने पर अपने को पापी समझते हैं। लडकी के सम्मान में ६० वर्ष का श्वसुर भी अपने छोटे से जवाई की आरती उतारकर उसे सिर-हाने बैठाता है। लडकी की ससुरालवाले जहा भी मिलते है उनको भेंट दी जाती है। ब्याह, गौना, छूछक, भात के अलावा हर बार पीहर आने पर लडकी को दायजा (दहेज) दिया जाता है। लडकीवाले लडकी के घर का पानी भी नहीं पीते। यह तो पीहर में आदर हुआ। ससुराल में जाते ही वह लक्ष्मी है। सब बिरादरी की औरतें आकर उसका दर्शन करती है और दर्शन में यथायोग्य भेंट देती है। यह भी अपने से बडी के पैर

कती है। जेवर, वस्त्र और खानपान से इसका यथेष्ट आदर होता है। सास कहती है "बेटी तू जाने यह तेरा घर जाने, हमको तो दो रोटी चाहिए' और पति उसपर कुर्बान ही रहता है। उसकी कमाई की कुंजी उसी के पास रहती है। खाने-पीने, गाय, भैंस, घर गृहस्थी के सामान और जेवर तथा बच्चो का प्रबन्ध इसी के हाथ में रहता है। इसी प्रबध काय में इसका बहुत सा समय निकल जाता है। ऐसी हालत में स्त्री को फौज तथा दफ्तर में जाने की फुरसत कहां ?

जब सतान ब्याह दी जाती है तब माता उनको अपनी नसीहत में चलाती है और खुद बेटे बहू पोते पोतियों पर राज करती है। इनको तो तीनो अवस्थाओं में सिवाय धधे में मौज करने के, विदेशी औरतों की तरह हर एक से हाथ मिलाने और सिनेमा में जाने की सूझती ही नहीं। आज विदेशियो ने हमें कगाल कर दिया है। सिविलिजेशन ने बहुत सी जमीन को आट रखा है, मजदूर स्त्रिया इसी जमीन पर आपको १०।१० सेर दूध बिलोती हुई मिलतीं। दो पैसे के बिस्कुट और चाय की प्याली पिलाकर और खड़ी एडियो के जूते पहना कर क्या मेरी बेटियों को दफ्तर भेजना चाहते हो ? यह आदर मुझे नहीं चाहिए। मैं चाहती हू कि घर में ही पहले की तरह सभी दूधों नहाय और पूतों फलें।"

त्यागी—"पति को तो स्त्री स्वय पसन्द करे तो अच्छा होगा।"

सस्कृति—"क्या विदेशी उजाले ने सनस्ट्रोक कर दिया है ? यह बात तो तब होनी चाहिए जब माता पिता पर विश्वास नहीं हो। नादान लडकी, पति-तलाश करने में खूबसूरती मात्र देखेगी। वर की योग्यता

हमारे यहा मर्दों पर और बच्चों पर औरतें बलिहारी रहती ह । नारी क काम में मद को और मद के काम में नारी को लगा देना ठीक नहीं ।

त्यागी – हमारे यहा स्त्रा को पाय की जूती समझते ह ।

संस्कृति– यह गलत ह हिन्दुस्तान जसा आदर कहीं नहीं ह । म अपनी बिगडी हुई हालत का वणन नहीं करती हू म लडकियो का मारनवाले और बचनवाले दुष्टो का भी जिक्र नहीं करती हू । म तो उस अपन यौवन काल का जिक्र करती हूँ जबकि एक गरीब लडकी अपना रक्षा के लिय एक पोहची (धागा) एक राजपूत के पास भजती ह तो वह थाली छोडकर उसकी रक्षा के लिय दिल्ली सम्राट से भी लडन में नहा हिचकता ह। वह रक्षा न कर सकन पर लडकी से पहले मरता ह ।

हमारे यहा लडकी ब्याही जान के समय से पहले देवी ह । लडकी को नान पीहर में हाथ जोडना नहीं ह । पीहर में किसी को धोती धोना और पलग बिछाना उसका अपमान ह । देवी के पूजन म लडकिया पूजी जाती ह । लडके की मौत पर लोग अपन स्वार्थवश रोते ह लेकिन क्वारी लडकी के मर जान पर अपन को पापी समझते ह । लडकी के सम्मान में ६० वष का श्वशुर भी अपन छोट से जवाई की आरती उतारकर उसे सिर हान बठाता ह । लडकी की ससुरालवाले जहा भी मिलते ह उनको भेंट दी जाती ह । ब्याह गौना छूछक भात के अलावा हर बार पीहर आन पर लडकी को दायजा (दहज) दिया जाता ह । लडकीवाले लडकी के घर का पानी भी नहीं पीते। यह तो पीहर म आदर हुआ। ससुराल में जाते हा वह लक्ष्मी ह । सब बिरादरा की औरतें आकर उसका दशन करती ह और दशन म यथायोग्य भट देती ह । यह भी अपन से बडी के पर

छूती है। जेवर, वस्त्र और खानपान से इसका यथेष्ट आदर होता है। सास कहती है "बेटी तू जाने यह तेरा घर जाने, हमको तो दो रोटी चाहिए" और पति उसपर कुर्बान ही रहता है। उसकी कमाई की कुंजी उसी के पास रहती है। खाने-पीने, गाय, भैंस, घर, गृहस्थी के सामान और जेवर तथा बच्चों का प्रबन्ध इसी के हाथ में रहता है। इसी प्रबन्ध कार्य में इसका बहुत सा समय निकल जाता है। ऐसी हालत में स्त्री को फौज तथा दफ्तर में जाने को फुरसत कहां ?

जब संतान ब्याह दी जाती है तब माता उनको अपनी नसीहत में चलाती है और खुद बेटे बहू पोते पोतियों पर राज करती है। इनको तो तीनो अवस्थाओं में सिवाय धंधे में मौज करने के, विदेशी औरतो की तरह हर एक से हाथ मिलाने और सिनेमा में जाने की सूझती ही नहीं। आज विदेशियो ने हमें कंगाल कर दिया है। सिविलिजेशन ने बहुत सी जमीन को आट रखा है, मजदूर स्त्रियां इसी जमीन पर आपको १०।१० सेर दूध बिलोती हुई मिलतीं। दो पैसे के बिस्कुट और चाय की प्याली पिलाकर और खडी एडियों के जूते पहना कर क्या मेरी बेटियों को दफ्तर भेजना चाहते हो ? यह आदर मुझे नहीं चाहिए। मैं चाहती हू कि घर में ही पहले की तरह सभी दूधा नहाय और पूता फलें।"

त्यागी—"पति को तो स्त्री स्वयं पसन्द करे तो अच्छा होगा।"

संस्कृति—"क्या विदेशी उजाले ने सनस्ट्रोक कर दिया है ? यह बात तो तब होनी चाहिए जब माता पिता पर विश्वास नहीं हो। नादान लडकी, पति-तलाश करने में खूबसूरती मात्र देखेगी। वर की योग्यता

गुण और सदाचार का समुचित निर्णय तो अनुभवी मा-बाप ही कर सकते हैं। हमारी संस्कृति सिर्फ रूप को नहीं देखती, यह देखती है गुण को।"

त्यागी—"दूसरे मुल्कों में तो आख की इशारेबाजी से युवक-युवतियां एक दूसरे को लुभाते हैं, शादी होने के पहले ही युवतियां गर्भवती तक हो जाती हैं।"

संस्कृति—"सब समझलो, अपने आप पति चुनना कैसा है, बेटा! हमारे यहां की शादियां विषयानन्द को मद्देनजर रखकर नहीं होतीं।"

त्यागी—"दुनिया को शांति चाहिए, वह कैसे मिले?"

संस्कृति—"अगर दुनिया सुख शांति चाहती है तो हमारी संस्कृति अपनायें। सुख के दो रास्ते हैं—एक, गलत रास्ता, दूसरा, सही रास्ता। भोगों में फंसना गलत रास्ता है। विदेश की स्त्रियां भोग ढूंढती हैं। भारत की स्त्रियां पातिव्रत्य से मुक्ति मानती हैं। मा-बाप की आज्ञा यहां शिरोधार्य है।

हमारे सब नियम कामना से दूर रहनेवाले हैं। निष्काम कर्म का अनुभव है कि ज्ञानेन्द्रियां वश में रहने से आनन्द होता है। जहां निष्कामता ज्ञान और आनन्द पैदा हो जाते हैं, वहीं शांति है, राम राज्य है।

यों तो समझो कि जो कर्म परम्परा से स्वाभाविक चला आ रहा है, या गुरु, माता, पिता और राजा से आदिष्ट कर्म है वह निष्काम कर्म है। हमारी संतान उसपर चलती है। अपनी कामना नहीं खड़ी करतीं।

आजकल उच्छृंखलता का जोर है। पाश्चात्य चकाचौंध में फंसना ठीक नहीं।'

त्यागी–"बेशक ! मैं समझ गया ; लेकिन संप्रदायों का क्या इंतिजाम करें ? यह तो एक दूसरे को चाहते ही नहीं ।"

संप्रदाय

संस्कृति–"जो देश के सहज स्वभाव में दूसरे देशों को वेश भूषा और भाषा का अड़ंगा खड़ा करे वह तो दूसरी बात है। पर ईश्वर या खुदा के नाम पर आम जनता में बेचैनी फैलाये, यह सह्य नहीं।

यों समझो कि सम्प्रदाय और जाति का अभिमान स्वाभाविक ही है। संसार भर में अनेक सम्प्रदाय हैं। हर एक अपने २ संस्कारों में बड़ा होता है। एक ही परमात्मा है, जो अपनी विभूतियों से प्रत्यक्ष है। भ्रांत लोगों को मालूम नहीं कि सब एक ही मसाले से बने हैं; इसीलिए वे लड़ते हैं। जो विभूति जहां से निकली है उसी उपादान कारण ईश्वर में लय हो जाती है।

संस्कृति के मुताबिक तालीम का प्रचार करो। राज दरबारी आदर्श होने चाहियें; तब बात अपने आप असरकारी होगी। जैसे पतलून और हैट को टोपी और धोती ने शर्मिंदा कर दिया। अनेक संस्कृतिया और संप्रदाय जब फैलते रहे हैं तो तुम्हारी संस्कृति क्यों न फैलेगी, वह तो हिये की प्यारी है; प्राकृतिक है; आहिस्ता २ सब ठीक हो जायगा। लेकिन सत्य को न छोडना। सत्य की हमेशा विजय होती है।

जहां एक पंथ दूसरे पर जुल्म करता हो, या प्राणियों को खतरे में डालता हो, उसको जरूर रोको।

जैसे लड़के लड़की की पैदाइश और मौत के रजिस्टर रखते हो वैसे ही तुम धर्म बदलनेवालों के, घर छोड़नेवालों के और लड़के लड़कियों

की शादियो के रजिस्टर जरूर रखो। भागतो को पकडने की जरूरत नहीं। पाखडियो को पकडो। एक लाठी से सबको मत हाको। सच्चे और झूठे सबमें होते ह। सत्य-अहिंसा का प्रचार करो जो सब धर्मों का सार है।"

त्यागी—'माता क्या करूँ ? सस्कृति की टेर मारनवालो ने नाक में दम कर रखा है। अभी देशन गुलामी से छुटकारा पाया है। हमें माता को स्वस्थ रखना है, लेकिन स्वार्थी लोग जिनको यह तो नहीं मालूम कि मेंह बरसने में कैसे २ गुण है, सिफ सफद कपडो पर बूदें पडने पर मेंह को (स्वराज्य को) गाली देते ह। ब्लैक मार्केट, चोरी, झूठ से नहीं चूकते। माता ! क्या हमारी सस्कृति झूठ पर खडी थी ? क्या झूठ जिदा रह सकता ह ? क्या यह झूठे बेईमान स्वार्थी तेरे को जिन्दा रख लेंगे ? म खूब समझता हूँ अपनी सस्कृतिवालों न सत्य के लिए राजपाट छोड दिये, आचरण के लिए जानें द दीं। आज कुकर्मी सस्कृति के हामी बनते ह। इनको देखकर मैं भी सस्कृति के दुःख में बेचन हू। म इन भाइयो का गुलाम इनको जिन्दा करना चाहता हू, पर ये नहीं मानते। तीर्थ, मदिर, दूकान, खेत, व्यापार,रेल, थाना, कचहरी ब्याह और खानपान सब में य चोरी , झूठ, अन्याय, अयुक्ति से काम लेते हैं।'

झूठ—चोरी का इन्तिजाम

सस्कृति—"परमात्मा के गुण ह—सचाई ज्ञान और आनन्द। माया आत्मा की छाया है, इसके गुण भ्रम और भय। जीव दोनों का मिश्रण है।

झूठ पर चलनेवाला आपे को नहीं देखता, साया को देखता है। ज्यूं ज्यूं वह कामना को मरोड़ी देता है, साया के अनेक रग रूप बन जाते हैं। आज की सतान को यह नहीं मालूम कि झूठ में सुख नहीं है भ्रम व भय ही मिलेगा।

बिल और कानून झूठे, कुटिल और चोरो को भय देने के लिए ही होते हैं। पहले ब्रह्मवेत्ताओ ने पाप कहकर खोटे कर्मों में भय दिखाया था और पुण्य कहकर अच्छे कर्मों के लिये उत्साहित किया। पाप कर्मों की तफसील और पुण्य कर्मों की तफसील खूब खोली गई थी। बिना जज के ही सुदर न्याय होता था। नई दुनिया तो देखने सुनने तक ही रह गयी है। पाप-पुण्य को हसी उड़ाती है और ग्रंथो की तफसीलों तथा पुराणों को झूठा और उनके बनानेवालो को ठग बताती है। अतः लोगों के दिलों में पाप का डर नहीं रह गया है तब क्यो न वे चोरी, बेईमानी में रत होवें! अब तो धर्म का अनुशासन और न्याय, रिश्वत और गवाहियों में रह गये हैं। यो न तो चोर हारेंगे। न जज न्याय कर सकेंगे; क्योकि पैसेवाले के गवाह बहुत है और रिश्वत खानेसे जज या मजिस्ट्रेट भी अपना है। बस लाठी जिसकी भैंस है। तुम पांच ईमानदार पच इतने दुराचार्यों को कैसे रोकोगे, सचमुच कानून के नाम पर जब न्याय की हत्या होती है।

मर्द और औरतो को सदाचार सिखाओ। खिताब और पदवी के लोभ में उन्हें मत भुलाओ।"

त्यागी–"अब मैं भाव समझ गया। अब प्रजा जो बढ़ गई है आहार-पान की संसार में कमी हो रही है, इसका क्या किया जाय?"

की शादियो के रजिस्टर जरूर रखो। भागता को पकड़ने की जरूरत नहीं। पाखण्डियो को पकड़ो। एक लाठी से सबको मत हाको। सच्चे और झूठे सबमें होते हू। सत्य-अहिंसा का प्रचार करो जो सब धर्मों का सार है।"

त्यागी–"माता क्या करूँ ? सस्कृति की टेर मारनेवालो ने नाक में दम कर रखा है। अभी देशन गुलामी से छुटकारा पाया है। हमें माता को स्वस्थ रखना है, लेकिन स्वार्थी लोग जिनको यह तो नहीं मालूम कि मेंह बरसने में कंसे २ गुण हैं, सिर्फ सफेद कपड़ो पर बूदें पड़ने पर मेंह को (स्वराज्य को) गाली देते हैं। ब्लैक मार्केट, चोरी, झूठ से नहीं चूकते। माता ! क्या हमारी सस्कृति झूठ पर खड़ी थी ? क्या झूठ जिन्दा रह सकता है ? क्या यह झूठे बेईमान स्वार्थी तेरे को जिन्दा रख लेंगे ? मैं खूब समझता हूँ अपनी सस्कृतिवालों ने सत्य के लिए राजपाट छोड दिये, आचरण के लिए जानें दे दीं। आज कुकर्मी सस्कृति के हामी बनते हैं। इनको देखकर म भी सस्कृति के दुःख में बेचैन हू। मै इन भाइयों का गुलाम इनको जिन्दा करना चाहता हू, पर ये नहीं मानते। तीर्थ, मंदिर, दूकान, खेत, व्यापार,रेल, थाना, कचहरी, ब्याह और खानपान सब में य चोरी , झूठ, अन्याय अयुक्ति से काम लेते है।"

झूठ—चोरी का इन्तिजाम

सस्कृति–"परमात्मा के गुण है–सचाई, ज्ञान और आनन्द।

माया आत्मा की छाया है, इसके गुण हैं–झूठ, भ्रम और भय। जीव दोनों का मिश्रण है।

झूठ पर चलनेवाला आपे को नहीं देखता, साया को देखता है। ज्यूं ज्यूं वह कामना को मरोड़ी देता है, साया के अनेक रग रूप बन जाते हैं। आज की संतान को यह नहीं मालूम कि झूठ में सुख नहीं है भ्रम व भय ही मिलेगा।

बिल और कानून झूठे, कुटिल और चोरो को भय देने के लिए ही होते हैं। पहले ब्रह्मवेत्ताओ ने पाप कहकर खोटे कर्मों में भय दिखाया था और पुण्य कहकर अच्छे कर्मों के लिये उत्साहित किया। पाप कर्मों की तफसील और पुण्य कर्मों की तफसील खूब खोली गई थी। बिना जज के ही सुंदर न्याय होता था। नई दुनिया तो देखने सुनने तक ही रह गयी है। पाप-पुण्य की हसी उड़ाती है और ग्रथों की तफसीलो तथा पुराणो को झूठा और उनके बनानेवालो को ठग बताती है। अत. लोगों के दिलो में पाप का डर नहीं रह गया है तब क्यों न वे चोरी, बेईमानी में रत होवें! अब तो धर्म का अनुशासन और न्याय, रिश्वत और गवाहियों में रह गये हैं। यो न तो चोर हारेंगे। न जज न्याय कर सकेंगे; क्योंकि पैसेवाले के गवाह बहुत है और रिश्वत खानेसे जज या मजिस्ट्रेट भी अपना है। बस लाठी जिसकी भेंस है। तुम पाच ईमानवार पंच इतने दुराचार्यों को कैसे रोकोगे, सचमुच कानून के नाम पर जब न्याय की हत्या होती है।

मर्द और औरतों को सदाचार सिखाओ। खिताब और पदवी के लोभ में उन्हें मत भुलाओ।"

त्यागी—"अब मैं भाव समझ गया। अब प्रजा जो बढ़ गई है आहार-पान की ससार में कमी हो रही है, इसका क्या किया जाय?"

न्यूनता से मुरझा जाते हैं। जो मनुष्य बनावटी चीजों का जितना आदी हैं उतना ही ज्यादा वह नाजुक है। आजकल तो सुनना, सूंघना, चखना, छूना, बोलना, और देखना सब कुछ ही बनावटी हैं। बस कुदरत को हर प्रकार से ढक दिया गया हैं। फिर बतलाओ तो सही, बेचारी अन्दर बैठी कुदरत कैसे सुख से रहेगी और बिना उसके मनुष्य भी सुखी कैसे हो सकेगा।

पहले पुरखा अपना नया साइन्स नहीं खडा करते थे। असलियत को समझने की कोशिश करके संयम में जिन्दगी बसर करते थे। जानवरो के भी स्वभाव को समझते थे। अब तो स्वार्थ प्रधान है। स्वार्थ, बुद्धि का नाश करता हैं। युक्त आहार विहार है ही कहा, जिसके बिना शांति असंभव है।

भोग और ऐश्वर्य किसी में भी अधिकता होने से चित्त में समता नहीं रहती ; राग द्वेष खडे हो जाते हैं ; चित्त खिन्न रहता हैं। इसलिए कुदरत को कुदरती ढग पर युक्ति से रहने दो। यह जो तुम नई नई बात की तरफ उड रहे हो, तुम्हारे नाश का मार्ग है, जैसे मरनेवाली चींटियों के भी तो पर निकलते हैं। नदी झरनों का पानी पीकर स्वस्थ न र[illegible] सको तो मशीनों का तो आसरा छोड दो।"

त्यागी-"माता! बिलकुल ठीक हैं, कामना अंधा कर देती हैं [illegible] मरने के कामों में जीना दीखता है। साइन्स की इतनी दौड-धूप का नतीजा आज यह हैं कि मरने-मारनेको हम पैदा हुए। आगे न जाने क्या होगा [illegible]

संस्कृति-"हम, आप और सिविलिजेशन सुन लें कि शांति की प[illegible] यतों में यही नियम बनाओ कि कुदरत की खाल न उखाडो, उसे सम[illegible] दो। यह अन्दर और बाहर सब जगह है, [illegible] देख[illegible] उसीकी सत्ता।

सस्कृति–"देखो ! एक आदमी के कितने मकान हैं। कितनी भाति के कुर्ते, कमीज, सूटर, नीकर, पतलून, जुर्राब, सोने की पोशाक–मशहरी, तकिये और पलग पोश आदि हैं। क्या २ कहू जरूरत और फैशन इतनी बढ़ गयी हैं कि हद नहीं। फिर भी नई दुनिया से उद्योग (industry) सीखने की कसर है। मनुष्य को नित नई चीजा का गुलाम बनाते हैं और भूरा का पेट industry से भरना चाहते हैं, यह नहीं सोचते कि क्या पेट में industry खायी जायगी ? अगर इससे पैसा पैदा होगा तो अनाज तो उतना ही होगा। यह नहीं सोचते कि अनाज पैदा करें। दूकानो, कारखानो, मदिरो, कबरो, यादगारो के स्थानो पर अनाज बोवें। पहले पुरुष खेतो पर झोपडी रखते थे। सिर्फ धोती अगोछे से अथवा नगे बदन रह कर तथा खेत, गाय और बैल रखकर मौज करते थे। कुदरत का सिनेमा देखते थे। फालतू बातो को छोडकर उन्हें फुर्सत ही फुर्सत थी।

दरख्तो के नीचे या छपरो में मदरसे थे। तख्ती, खडिया, सरकडा कुल्हिया से गुरु सब कुछ पढा देता था। कसरत में कबड्डी, दण्ड, कूदना, फादना चाहे जहा कर लेते थे।

अब स्कूलें भी काश्त योग्य विस्तृत जमीन का हिस्सा रोक लेती हैं, जिससे काश्त में नुक्सान पहुचता है। कसरत के लिये व्यायामशालाए बीघों जमीन घेर लेती हैं। इसके अलावा वालीबाल, क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, घुड्दौड और विविध उद्योगों पर भी मीलो जमीन कुर्बान होती है। तमाम दुनिया में राशन तो बध रहे हैं फिर भी पेट भरने के लिए industry को ही उपाय समझते हैं।

तुम अधिक जमीन बोओ। कुदरती जीवन बिताओ। नयी २ बातों में मत बहको। सरल कुदरती जिन्दगी अधिक सुखदाई होती है। जगलों में कुदरत पर रहने वाले वृक्ष, ऋतुओं की रद्दोबदल से भी नहीं मुरझाते, किन्तु मनुष्यों द्वारा लगाये पौधे (बागों में) जल की जरासी

कुदरती जिन्दगी से रोटी और शान्ति

संस्कृति–' सिर में उतने ही बाल होते हैं जितनी सिर में ताकत होती है। भूमि माता ज्यादा औलाद नहीं उपजाती। तुम ही तो कुदरत को आट कर या तोडफोडकर तगी फैलाते हो।"

प्रेमी–"कैसे ?"

संस्कृति–"अव्वल तो तुम्हें कुदरत का खयाल ही नहीं है, क्योंकि दुनिया के झझटो में तुम्हें फुरसत कहा है ? खेती-बाडी के काम में तो १० फी सदी से ज्यादा आदमी नहीं हैं। अधिकतर जमीन को सडक, महलात, पोलोग्राउड, रेसकोर्स,रेल, मदिर, मस्जिद, गिर्जा, सिनेमा, कबरिस्तान और श्मशान वगैरह से रोक रखा है। खेती की जमीन दिन पर दिन कम हो रही है। यह कहा की बुद्धिमानी है कि भूखे मरो और यादगार बनाओ। य भरे पेट के काम हैं। बिना रोटी के न पडित रहेगा, न महात्मा-मौलवी की यादगार को कोई देखेगा।

पूर्व पुरुषा सरल सीधे मुख्तसर रहकर अपनी कोशिश को आत्म उद्धार में लगाते थे। मुख्तसर घरो में रहते थे। खेती करते थे और कुदरत के साथ ही अपनी जिन्दगी बिताते थे।"

त्यागी–"आपका मतलब है कि हर बात के लिए जमीनो को खराब न करो सिर्फ गुजारे लायक मकान बनाओ। कपडों के लिए दर्जी, खाने के लिए हलवाई तथा मनिहारी की अनेक सामग्री के कारीगर, फर्नीचर बनानेवाले, रग रौगनवाले, मशीन बनानेवाले वगैरह सब ठग हैं, व्यर्थ में जमीन रोकते है।',

सस्कृति—'देखो ! एक आदमी के कितने मकान हैं। कितनी भांति के कुर्ते, कमीज, सूटर, नीकर, पतलून, जुर्राब, सोने की पोशाक—मशहरी, तकिये और पलग पोश आदि हैं। क्यार मकू जरूरत और फैशन इतनी बढ़ गयी हैं कि हद नहीं। फिर भी नई दुनिया से उद्योग (industry)सीखने की कसर है। मनुष्य को नित नई चीजों का गुलाम बनाते ह और भूख का पेट industry से भरना चाहते हैं, यह नहीं सोचते कि क्या पेट में industry खायी जायगी ? अगर इससे पैसा पैदा होगा तो अनाज तो उतना ही होगा। यह नहीं सोचत कि अनाज पैदा करें। दूकानों, कारखानों, मदिरों, कबरों, यादगारों के स्थानो पर अनाज बोयें। पहले पुरुष, खेतों पर झोपडी रखते थे। सिर्फ धोती अगोछे से अथवा नगे बदन रह कर तथा खेत, गाय और बैल रखकर मौज करते थे। कुदरत का सिनेमा देखते थे। फालतू बातो को छोडकर उन्हें फुर्सत ही फुर्सत थी।

दरख्तो के नीचे या छपरो में मदरसे थे। तख्ती, खड़िया, सरकडा कुल्हिया से गुरु सब कुछ पढ़ा देता था। कसरत में कबड्डी, दण्ड, कूदना, फादना चाहे जहां कर लेते थे।

अब स्कूलें भी काश्त योग्य विस्तृत जमीन का हिस्सा रोक लेती हैं, जिससे मादा में नुकसान पहुचता है। कसरत के लिये व्यायामशालाए बीघो जमीन घेर लेती हैं। इसके अलावा वालीबाल, क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, घुड़दौड़ और विविध उद्योगों पर भी मीलों जमीन कुर्बान होती ह। तमाम दुनिया में राशन तो बच रहे हैं फिर भी पेट भरने के लिए industry को ही उपाय समझते हैं।

तुम अधिक जमीन बोओ। कुदरती जीवन बिताओ। नयी २ चालों में मत पड़ो। सरल कुदरती जिन्दगी अधिक सुखदाई होती है। जगलों में कुदरत पर रहने वाले पुरुष, ऋतुओं की कठोरता में भी नहीं मुरझाते, किन्तु मनुष्यों द्वारा लगाये पौधे (बागो में) जल की जरासी

न्यूनता से मुरझा जाते हैं। जो मनुष्य बनावटी चीजों का जितना आदी है उतना ही ज्यादा वह नाजुक है। आजकल तो सुनना, सूघना, चखना, छूना, बोलना, और देखना सब कुछ ही बनावटी हैं। बस कुदरत को हर प्रकार से ढक दिया गया है। फिर बतलाओ तो सही, बेचारी अन्दर बैठी कुदरत कैसे सुख से रहेगी और बिना उसके मनुष्य भी सुखी कैसे हो सकेगा।

पहले पुरखा अपना नया साइन्स नहीं खडा करते थे। असलियत को समझने की कोशिश करके सयम में जिन्दगी बसर करते थे। जानवरो के भी स्वभाव को समझते थे। अब तो स्वार्थ प्रधान है। स्वार्थ, बुद्धि का नाश करता है। युक्त आहार विहार है ही कहा, जिसके बिना शाति असभव है।

भोग और ऐश्वर्य किसी में भी अधिकता होने से चित्त में समता नहीं रहती, राग द्वेष खडे हो जाते हैं, चित्त खिन्न रहता है। इसलिए कुदरत को कुदरती ढग पर युक्ति से रहने दो। यह जो तुम नई नई बातो की तरफ उड रहे हो, तुम्हारे नाश का मार्ग है, जैसे मरनेवाली चीटियो के भी तो पर निकलते हैं। नदी झरनों का पानी पीकर स्वस्थ न रह सको तो मशीनो का तो आसरा छोड दो।"

त्यागी—"माता! बिलकुल ठीक है, कामना अधा कर देती है तब मरने के कामो में जीना दीखता है। साइन्स की इतनी दौड-धूप का नतीजा आज यह है कि मरने-मारनेको बम पैदा हुए। आगे न जाने क्या होगा।"

सस्कृति—"बस, आप और सिविलिजेशन सुन लें कि शाति की पचायतों में यही नियम बनाओ कि कुदरत की खाल न उखाडो, उसे सम्मान दो। यह अन्दर और बाहर सब जगह है; यह जो कुछ दिखाई देता है उसीकी साया है। साया के पीछे इसे न भगाओ। इसको फिजूल बातें नहीं सुहातीं, उपयुक्त परवरिश चाहिए।"

॥ समाप्त ॥

श्रीयुक्त रामवृ

and Library book in Primary, Vernacular Middle an
Normal Schools of the Central Provinces and Be

सचित्र

ऐतिहासिक लेख

लेखक—
श्रीयुक्त रामकुमार गोयेनका

—•—

इतिहासपुराणं पञ्चमो वेदानां वेदः
छांदोग्य

प्रकाशक—
म० प्र० पोद्दार

मिलनेका पता—
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६ हरिसन रोड, कलकत्ता।

प्रथम बार] सं० १९७५ वि० [मूल्य ।=)

समर्पण

हमारी मारवाड़ी समाजके उज्वल रत्न, वैश्यकुल भूषण

हिन्दी भाषाके धुरन्धर विद्वान्

-और-

भारतमित्रके भूतपूर्व सम्पादक परमश्रद्धास्पद

स्वर्गवासी

बाबू बालमुकुन्द गुप्त

-की-

पवित्रात्माको यह पुस्तक उनके वात्सल्यभाजन

और

अनुरक्त भक्त द्वारा

समर्पित है

रामकुमार

रामलाल वर्म्मा द्वारा

"वर्मन प्रेस" ३७१ अपर चीतपुर रोड, कलकत्तामें

मुद्रित।

समर्पण

हमारी मारवाड़ी समाजके उज्वल रत्न, वैश्यकुल भूषण

हिन्दी भाषाके धुरन्धर विद्वान्

- और -

भारतमित्रके भूतपूर्व सम्पादक परमश्रद्धास्पद

स्वर्गवासी

बाबू बालमुकुन्द गुप्त

- की -

पवित्रात्माको यह पुस्तक उनके वात्सल्यभाजन

और

अनुरक्त भक्त द्वारा

समर्पित है

रामकुमार

कर्त्तव्य

'हिन्दीके लिए यह परम सौभाग्यकी बात है कि व्यापारी जातिके लोग उसके साहित्यसे अनुराग ही दिखाकर सन्तुष्ट नहीं हैं, वरन् उसकी वृद्धि और उन्नतिमें भी भाग ले रहे हैं। भारतके प्रसिद्ध व्यापारी मारवाड़ी भाइयोंने भी हिन्दीके लिए कुछ काम किया है। प्रचारके हिसाबसे देखा जाय तो भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक तीर्थयात्रियों और मारवाड़ियों द्वारा ही हिन्दीका विशेष प्रचार हुआ है। लेखकोंकी श्रेणीमें भी 'स्वर्गीय श्रीशिवचन्द्रजी भरतिया और लाला श्रीनिवासदासजी और वर्त्तमान सेठ श्रीकन्हैयालालजीपोद्दार आदि सज्जनोंके नाम उल्लेखयोग्य हैं। आज भी श्रीभगवानदासजी हालना आदि कई नवयुवक मित्र हिन्दीकी अच्छी सेवा कर रहे हैं। हिन्दी पाठकोंको आज मैं अपने एक ऐसे ही प्रिय मित्र श्री रामकुमारजी गोयेनकाके लेखोंका परिचय देना चाहता हूं। यों तो हिन्दी संसार आपसे अपरिचित नहीं है। भारतमित्रके कालमोंमें मारवाड़ियोंमें सामाजिकसुधार, व्यापार, तथा कलकत्तेकी म्यूनिसिपलिटी आदिके सम्बन्धमें गोयेनकाजीकी कई लम्बी लम्बी लेखमालायें नाम और बेनामसे निकल चुकी हैं। सरस्वती तथा देवनागर आदि मासिक पत्रोंमें भी आपने लिखा है। आपके लिखनेमें खास खूबी यह होती है

वक्तव्य

हिन्दीके लिए यह परम सौभाग्यकी बात है कि व्यापारी जातिके लोग उसके साहित्यसे अनुराग ही दिखाकर सन्तुष्ट नहीं हैं, वरन् उसकी वृद्धि और उन्नतिमें भी भाग ले रहे हैं। भारतके प्रसिद्ध व्यापारी मारवाड़ी भाइयोंने भी हिन्दीके लिए कुछ काम किया है। प्रचारके हिसावसे देखा जाय तो भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक तीर्थयात्रियों और मारवाड़ियों द्वारा ही हिन्दीका विशेष प्रचार हुआ है। लेखकोंकी श्रेणीमें भी स्वर्गीय श्रीशिवचन्द्रजी भरतिया और लाला श्री निवासदासजी और वर्त्तमान सेठ श्रीकन्हैयालालजीपोद्दार आदि सज्जनोंके नाम उल्लेखयोग्य हैं। आज भी श्रीभगवानदासजी हालना आदि कई नवयुवक मित्र हिन्दीकी अच्छी सेवा कर रहे हैं। हिन्दी पाठकोंको आज मैं अपने एक ऐसे ही प्रिय मित्र श्री रामकुमारजी गोयेनकाके लेखोंका परिचय देना चाहता हूं। यों तो हिन्दी संसार आपसे अपरिचित नहीं है। भारत-मित्रके कालमोंमें मारवाड़ियोंमें सामाजिकसुधार, व्यापार, तथा कलकत्तेकी म्यूनिसिपलिटी आदिके सम्बन्धमें गोयेनका-जीकी कई लम्बी लम्बी लेखमालायें नाम और वेनामसे निकल चुकी हैं। सरस्वती तथा देवनागर आदि मासिक पत्रोंमें भी आपने लिखा है। आपके लिखनेमें खास खूबी यह होती है

वक्तव्य

हिन्दीके लिए यह परम सौभाग्यकी बात है कि व्यापारी जातिके लोग उसके साहित्यसे अनुराग ही दिखाकर सन्तुष्ट नहीं हैं, वरन् उसकी वृद्धि और उन्नतिमें भी भाग ले रहे हैं। भारतके प्रसिद्ध व्यापारी मारवाड़ी भाइयोंने भी हिन्दीके लिए कुछ काम किया है। प्रचारके हिसाबसे देखा जाय तो भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक तीर्थयात्रियों और मारवाड़ियों द्वारा ही हिन्दीका विशेष प्रचार हुआ है। लेखकोंकी श्रेणीमें भी स्वर्गीय श्रीशिवचन्द्रजी भरतिया और लाला श्री निवासदासजी और वर्तमान सेठ श्रीकन्हैयालालजीपोद्दार आदि सज्जनोंके नाम उल्लेखयोग्य हैं। आज भी श्रीभगवानदासजी हालना आदि कई नवयुवक मित्र हिन्दीकी अच्छी सेवा कर रहे हैं। हिन्दी पाठकोंको आज मैं अपने एक ऐसे ही प्रिय मित्र श्री रामकुमारजी गोयेनकाके लेखोंका परिचय देना चाहता हूं। यों तो हिन्दी संसार आपसे अपरिचित नहीं है। भारत-मित्रके कालमोंमें मारवाड़ियोंमें सामाजिकसुधार, व्यापार, तथा कलकत्तेकी म्यूनिसिपलिटी आदिके सम्बन्धमें गोयेनकाजीकी कई लम्बी लम्बी लेखमालायें नाम और बेनामसे ... चुकी हैं। सरस्वती तथा देवनागर आदि मासिक ... आपने लिखा है। आपके लिखनेमें खास खूबी यह

सचित्र

ऐतिहासिक लेख ।

इतिहास प्रदीपेन मोहावरण घातिना ।
लोक गर्भगृहंकृत्स्नं यथावत् संप्रकाशितम् ॥*

(महाभारत आदि० अ० १ श्लोक ८०)

नये अनुसन्धान ।

भारतवर्षका इतिहास बहुत कम मिलता है, जो मिलता है वह भी अधूरा और बहुतसी आवश्यक बातोंसे खाली। इसके कई कारण हैं। भारतवर्षके जो इतिहास-ग्रन्थ आज-कल देखे सुने और पढ़े पढ़ाये जाते हैं, वे अधिकांश अङ्गरेज या मुसलमानोंके लिखे होते हैं, जो दोनों ही विदेशी हैं। विदेशी चाहे कितना ही विद्वान् विचारशील, उदार और अनु-

* इतिहास रूपी दीपकसे प्रकाश से अज्ञानान्धकारका नाश होकर संसारके पदार्थ यथावत् दिखलाई देने लगे।

भवी क्यों न हो पर वह दूसरे देशकी बातें उस देशके निवासियोंकी चाल-ढाल, भाव-विचार, रीति-रिवाज आदिको उतना हृदयङ्गम नहीं कर सकता जितना उस देशका एक निवासी अनायास ही कर सकता है। इस लिये एक देशका इतिहास दूसरे देशवासीका लिखा हुआ किस तरह सर्वाङ्गपूर्ण हो सकता है ?

भारतवासियोंने अपना इतिहास आप क्यों नहीं लिखा, इसका ठीक कारण बताया नहीं जा सकता पर जिस समय मुसलमानोंने इस देशमें पदार्पण किया था उस समय भारत अविद्यान्धकारसे छाया हुआ तो था ही उसपर मुसलमानोंके आगमनसे पराधीनताने हिन्दुओंको और भी कर्तव्यभ्रष्ट कर डाला। ऐसे समयमें अपने इतिहासको लिखना वा उसे बनाये रखना कठिन ही नहीं एक तरह असम्भव था। पर अब समय बदल गया है। अब कुछ दिनोंसे स्वदेश-प्रेम रूपी एक नवीन सञ्जीवनी शक्तिने जन्म लेकर साक्षात् भुवन-भास्करके उदयकी घोषणा कर हमारे इस तमसाच्छन्न देशमें सुप्रभातका सजीव विकाश किया है। वही प्रकाश मानो हमें पुकार कर कह रहा है कि अब सोनेका समय नहीं है। हमारी निद्रा—गाढ़-निद्रामें हमारे बड़े बड़े कार्य्य नष्ट भ्रष्ट हो गये। हमारा बड़ी मिहनतसे कमाया हुआ संचित धन चोर डाकू लुटेरे लूट खसोटकर ले गये और बचाखुचा जला कर भस्म कर गये। हमारे बड़े बड़े उज्ज्वल रत्न टूट फूट

कर तहस नहस होते चले जाते हैं और कंकर पत्थरोंकी तरह इधर उधर मारे मारे फिरते हैं, उनकी ओर जरा देखो! 'जागो, उठो, सम्भालो ; बचालो रही सही!' अब हमें बिना विलम्ब अपने उन टूटेफूटे रत्नोंको गोदमें उठाकर बड़े बड़े सुविज्ञ चित्र-कार शिल्पियोंकी सहायतासे यथास्थान सुन्दर सुचारुरूपसे बिठवानेकी चेष्टा करनी चाहिये। हमें चाहिये कि अपने हाथों, अपने कामों, अपने पुरुषार्थ और अपने अनुसन्धानसे भारतीय इतिहासको सर्वाङ्गसुन्दर बना डालें।

सर्वाङ्गसुन्दर, सर्वाङ्गपूर्ण इतिहास बनानेके लिये पहले उसका सामान—मसाला एकत्र करना होगा। बिना सामान—मसालेके दुनियामें कोई वस्तु नहीं बन सकती। इस लिये इस समय हमारा पहला काम भारतीय इतिहासके लिये सामान एकत्र करना है। सामान एकत्र करनेका भार यदि सभी स्वदेश प्रेमीगण यथाशक्ति अपने अपने मत्थे लें तो यह सहज ही सुचारुरूपसे सुसम्पन्न हो सकता है।

'बीती ताहि बिसार दे आगेकी सुध ले,' जो सामान नष्ट हो गया है, जो समय हाथसे निकल गया है उसके लिये वृथा आंसू बहाकर कर्त्तव्यच्युत होनेकी आवश्यकता नहीं है। इस समय जो मिलता है या मिल सकता है उसे ही एकत्र करना चाहिये। आज जो मिलता है या मिल सकता है वह भी कुछ दिनोंमें मिलना कठिन हो जायगा तब उसके लिये आंसू बहानेसे क्या होगा? उपस्थितको यत्नसे न ...

नष्ट हुएकी तलाश की जायगी तो उसका मिलना तो दूर रहा जो उपस्थित है वह भी नष्ट हो जायगा।

इसलिये स्वदेशप्रेमी, साहित्य-सेवियोंसे अनुरोध है कि, प्राचीन इतिहास न मिलनेसे निराश हो आधुनिक इतिहाससे मन न हटावें और आधुनिक समयकी बातें तलाश कर एकत्र करें और अपने बड़े बूढ़ोंके मुखसे सुन सुनकर पुरानी बातोंका लिखना आरम्भ करें तथा अपने घरमें, देशमें, मित्रोंके पास जो पुराने कागज-पत्र बही-खाते आदि हों उन्हें यत्नसे किसी उपयुक्त स्थानपर रखें और उनमें लिखी बातें प्रकाश करनेकी चेष्टा करें।

चूरूकी वही ।

चूरूकी एक वही विक्रम सम्वत् १८४४ (ईस्वी सन् १७८७) की बाबू रामरतन दास सिंघानियाके पास मेरे देखनेमें आयी। उसका कुछ अंश नीचे प्रकाशित किया जाता है। इससे इतिहास प्रेमी पाठक अनुमान कर सकेंगे कि ऐसे कागज पत्रोंको एकत्र करनेकी कितनी आवश्यकता है।

यह वही गिरधारीलाल गोपीरामके दुकानकी है। गिरधारी लाल, रामरतन दास सिंघानियाके बड़े बाबा और गोपीराम बाबा होते थे। सुना है कि, उन दिनों इनका काम बहुत अच्छी दशामें था। कई भाइयोंके साझेमें इनकी दिल्ली, बीकानेर, कानोड़, सूरजगढ़, चन्दौसी और चूरू जैसे छः शहरोंमें दुकाने चलती थीं। इनका निवास-स्थान चूरू था। यह उसी चूरूकी दुकानकी वही है। चूरू राजपुताना—बीकानेरके अन्तर्गत एक पुराना और प्रसिद्ध शहर है। इसी चूरूके नामसे बहुतसे स्थानोंमें मारवाडी लोग चूरूवाले कहलाते हैं।

वही मारवाड़ी मुड़िया अक्षरोंमें है। मुड़िया अक्षरोंकी खराबी सभी लोग जानते हैं। मुड़िया अक्षर विना स्वर मात्राके लिखे जाते हैं और कितने ही व्यंजन वर्ण भी व्यवहार नहीं किये जाते। तथा उन्हें भी लिखनेवाले अपनी

इच्छानुरूप कई तरहसे लिखते हैं। इसलिये एक पुरानी चीज मिल जानेसे भी उसको साद्यन्त अच्छी तरह पढ लेना कुछ सहज काम नहीं है। बाबू रामरतन दास (जिनके पास यह वही है) इस समय * ८१ ८२ वर्षकी अवस्थाके हैं और गरीबीकी हालतमें हैं। सिवाय अब इनको आखोंसे दिखलायी भी नहीं देता। इनको दिखलायी देता तो इसके पढे जानेमें बहुत सहायता मिल सकती। किन्तु बाबू रामरतन दासकी स्मरणशक्ति बडी प्रबल है। उस स्मरणशक्तिकी सहायतासे इन्होंने जहा तक सम्भव हुआ मदद दी और मैंने भी इसके पढनेमें पूरी चेष्टा की है। जितना पढा जा सका है उसका साराश पाठकोंको सुनाया जाता है।

वही अन्दाज ५० पन्नोंकी है, जिनमें पाच सात पत्र फटे या अधफटे हैं। पर इस हालतमें भी सवासौ वर्ष तक कागज और स्याहीका स्थायित्व उन दिनोंके हाथके बनाये कागज और स्याहीकी उत्तमताका नमूना भली भाति दिखला रहा है।

वहीमें विक्रम सम्वत् १८४४ से १८८१ तकके लेख पाये जाते हैं, पर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि उक्त वही केवल १८४४ सम्वतकी है। दूसरे सम्वतोंके केवल याददाश्त, विवाह खर्च, दिवाली और दशहरेकी पूजन आदिके लेख हैं, जैसा कि हमारी वहियोंमें आजकल भी पाये जाते हैं।

* यह लेख सन १९०९ ई० में लिखा गया था। अब तो बाबू रामरतनदासकी मृत्यु हो चुकी है।

पहले सात पत्रोंमें सम्वत् १८४४ के वैशाख शुक्ल १३ से आरम्भ करके ज्येष्ठ कृष्ण ११ तक १२॥ महीनोंकी सिलसिलेवार 'नक्लकी'* लिखावट है। उसमें जिन चीजोंके नाम, वजन, भाव, दर आये हैं उनकी सूची बनाके नीचे दी जाती है। एकसाथ कमसे कम या ज्यादासे ज्यादा जितना माल बिका है, उसकी संख्या भी इसमें दी गयी है।

सूची नं० १—माल बिक्रीकी।

मालका नाम	वजन कमसे कम	ज्यादासे ज्यादा	दर कमसे कम	ज्यादासे ज्यादा
हींग †	)॥/	)४ ‡	॥।≠)॥	१/) फी सेर
सीसा (lead)	)७≠१	॥)।/	२०)	२१) „ मन
मिर्च	)१॥	।)	५८)	६०॥) „ „
सुपारी	)२॥	५)५।/	१३।)	१३॥) „ „

* नकल एक बहीका नाम होता है जिसमें मालका लेनदेन (खरीद बिक्री) लिखा जाता है।

† हींग दो तरहका लिखा है ; एक हाडीका जो हाडीमें आता था, दूसरा पालका जो चमड़ेके कूपोंमें आता था।

‡ उस समय चूरूमें एक सेर वजन ४२ गजसाही रुपयोंका होता था। गजसाही रुपयेका वजन वर्त्तमान अंगरेजी रुपयेके बराबर था तथा रुपया खालिस चांदीका था। उस समय राजपुतानाके दूसरे बहुतसे शहरोंमें ५६ भरीका सेर था और बहुत जगह अब भी है। पर चूरूमें ४२ भरीका ही सेर होना बाबू रामरतनदासने बतलाया है।

मालका नाम	वजन कमसे कम	ज्यादेसे ज्यादा	दर कमसे कम	ज्यादेसे ज्यादा	
गेरू *	)८।	•	१२)	०	फी मन
मुनक्का	)२॥	॥)	१४।)	१५।)	„ „
इलायची	)॥	)४	६)	७॥॥)	„ सेर
लौंग†	)।	२)॥	६॥)	१०॥)	„ „
गुड़	२)	२४॥)	।)६	।)६॥	रुपयेका
सीतल चीनी	)॥	०	२)	०	फी सेर
गंधक	)॥॥॥॥	३॥)५	१०॥)	१२)	„ मन
गोला(गरीका)	)५	॥)	२२॥)	२२॥)	„ „
छुहारा	)५	१।)।	१०)	१०॥)	„ „
फिटकरी सुफेद	।)।	१॥)	८॥)	६)	„ „
पीपल मोटी	)५	०	१८)	०	„ „
लाख	)५	१)५	२३)	२४)	„ „
वालछड़	)२॥	)७॥	१६)	२०)	„ „
जस्ता	२)१।ढीगा२	०	२४॥)	०	„ „
अफीम	)॥	)१॥	२)	२।)	„ सेर
रांगा डली	।)६।	०	४६)	०	„ मन
चोव चीनी	)१॥	०	५॥)		

* शब्द ठीक नहीं पढ़ा जाता 'ग र' लिखा है अनुमानसे गेरू किया गया है।

† लौंगके दामोंपर आश्चर्य होता है। पर बहीमें कई जगह ठीक यही दर मिलती है।

नील)२॥ , ।)३। , ७७) ८१।) फी मन
शक्कर ।)६। एक रुपयेकी
चुन्दरी , नग १४ कुल, ६॥।) की
मसरू (भावनगरी रेशमी कपड़ा) २ थान कुल १६) १थान ७॥।) का

सूची नं० २—माल खरीदकी।

खेड़ी (इस्पात) मन ८) दर २३।ॽ) फी मन
सुहागा वजन मन ४)२॥ दर १५।) फी मन
कायफल " " ६॥।), ८) " ३।ॽ) " "

बहीसे यह पता नहीं लगता कि कौन माल किस भावपर खरीदा गया था और उसमें कितना मुनाफा रहा।

बहीमें सिवाय पहले सात पन्नोंके और कहीं कोई सिलसिलेवार लिखावट नहीं पायी जाती। कितनी ही जगह मिती संवत् पाये जाते हैं किन्तु अधिकांश नदारद। एक जगह दूसरे शहरोंसे आने और भेजे जानेवाले मालका लेखा है; किन्तु वहां सिवाय नाम धाम और वजनके दर दाम नहीं है। किसी मालकी बिक्री मिलती है तो उसकी खरीदका पता नहीं लगता; किसीकी खरीदका पता लगता है तो उसकी बिक्री नहीं मिलती! किसी मालके मीजानकी घटा बढ़ी और घाटे मुनाफेका कुछ भी पता नहीं लगता।

बहीकी लेख प्रणालीको देखते हुए यह जानकर बड़ा आश्चर्य होता है कि, बहीके मालिकोंकी, कई भाइयोंके साझेमें, भिन्न भिन्न शहरोंमें छः दूकानें चलती थीं। समझमें नहीं आता

कि, इस तरहकी लिखावटके रहते वे लोग परस्पर किस प्रकार हिसाब कर लेन देन और बटवारा करते थे। सम्भव है कि भाइयोंमें परस्पर बटवारा न होता हो, जिसका जितना, खर्च लगता हो वह उतना ले लेता हो, वा यह दूकान केवल उसी एक भाईके जिम्मे हो जिसकी यह वही थी। लेखप्रणाली के अनुसार तो पिछली वातका होना ही अधिक सम्भव जान पड़ता है। किन्तु वहीके देखनेसे एक वातका तो निश्चय हो जाता है कि उस समयके लोगोंके जीमें कानूनी आतङ्क लेश मात्र भी नहीं था।

आज कल जिस प्रकार कानूनी आतङ्कके मारे बहुतसी वहियां रखनी पडती हैं, और उनमें जैसे सुधार बनाकर लेख लिखे जाते हैं, उन दिनों इसकी आवश्यकता ही नहीं थी। पर मजा तो यह है कि, आजकल केवल वही खातोंकी अलमारियां भर रखनेसे ही व्यापारियोंका छुटकारा नहीं; जरा जरासे हिसावकी सफाईके लिये वहियोंके खांचे भर भरकर वरसोंतक अदालतमें ठोकरें खानी पडती हैं! इतनी वहियां रखनेपर भी कानूनी आतङ्कके मारे वेचारे मालिकका जी सूखता रहता है, और कानूनी पेंचोंके मारे सच्चेका झूठा और झूठेका सच्चा हो ही जाता है। इस प्रकारके आतङ्कका आभास तक उस समय नहीं था, यह उक्त वहीको देखनेसे भली भांति जाना जाता है। इस प्रकारकी एकही वहीसे आजकलकी बहुतसी वहियोंका काम लिया जाता था। इसमें

लेखकने ऐसे निस्शङ्क भावसे लेख लिखे हैं मानों उसे कभी कोई देखने और पूछनेवाला नहीं मिलेगा। केवल अपनी याददास्तके लिये लेखकके जो जीमें आया लिख रखा और जिसे इच्छा हुई छोड दिया।

वहींके ८वें पृष्ठसे एक खातेका छाया चित्र (फोटो) अन्यत्र दिया जाता है। इससे हमारे मारवाडी भाई वहीकी बहुत बातोंका अनुभव कर सकेंगे।

चित्रकी लेखकी नकल।

१ श्रीरामजी सहाय छः

लेखो चतुर्भुज जिन्दाराम नेती * * *

३॥≈) १६* अमलको पत्तो १	३) रोकडी अमल §
५१𝓈	पेटे दिया
१॥≈)। मिरच ⌄२॥ दर २६।)	२) रोकडी गजसाही
	ताराचन्दन दिया
२≈)१।† तमाखु ।)‡ दर ४।)	मितो पोह सुदी ६
७।≈)॥१।	५)
	२।≈)। १।३ बाकी पेटे दिया
	७।≈)। १।३

* १८ दाम है। एक पैसेके २५ दाम होते हैं; १८ दामका अर्थ पौन पैसा हुआ।

† २≈) के ऊपर १ टका लिखा है। टका राजपूतानेमें दो पैसोंको कहते हैं और लिखनेमें खडपर पाई (।) देनेसे टका समझा जाता है।

‡ तम्बाखूका वजन आध मन होना चाहिये। भूलसे दस सेर लिखा गया जान पडता है।

§ अमल—अफीमको कहते हैं।

इस खातेमें एक विशेषता है। कलकत्तेकी मारवाडी समाज के वर्त्तमान सरपञ्च सेठ ताराचन्द घनश्याम दास पोद्दारकी चूरूमें जो दूकान उस समय चलती थी उसीके साथ लेनदेनका यह खाता है।

सेठ भगवतीरामके (जिनके नामसे ऊपर लिखे सरपचोंके कुलकी ख्याति है) तीन पुत्र थे—(१) आज्ञाराम (२) जुगल किशोर (३) चतुर्भुज। चतुर्भुजके तीन पुत्र थे—(१) जिदाराम (२) जूरीमल (३) ताराचन्द।

चूरूकी दूकान चतुर्भुज और उनके बडे पुत्र जिन्दारामके नामसे चलती थी। उसी नामसे खाता है। इन्हीं ताराचन्दके नामसे कलकत्तेकी वर्तमान (फार्म) कोठी चलती है।

ऊपर लिखा जा चुका है, कि वहीमें किसी खास मालकी खरीद बिक्री और घाटे मुनाफेका पता नहीं चलता, केवल मालकी खरीद या बिक्रीके भाव पाये जाते हैं। परन्तु बहुत देखभालसे इस विषयका जो कुछ पता लग सका है, उसीका दिग्दर्शन नीचे किया जाता है। यद्यपि इससे कोई निश्चित सिद्धान्त नहीं किया जा सकता, पर कुछ कुछ अनुमान अवश्य ही किया जा सकता है।

सूची नं० १ में अफीमकी बिक्री २)—२।) रु० सेर दिखायी जा चुकी है। परन्तु चित्रमें अफीमकी खरीद ३) रु० सेर पायी जाती है। सम्भव है, कि यह अफीम किसी बढिया जातिका हो।

तालिका नं० १में मिर्चकी बिक्री ५८)—६०॥) रु० मन है। चित्रमें मिर्चकी खरीद २६।) रु० मन है और पृष्ठ ३६ पर एक खातेमें २॥ सेर मिर्चका २८॥।) रु० मनके भाव खरीदना पाया जाता है। कहा नहीं जा सकता, कि यह मिर्च किसी खराब जातिकी थी या थोड़ी होनेके कारण विक्रेताकी गरजपर मुह-मांगे दामों खरीदी गयी या मिर्चमें इतना अधिक मुनाफा था!

सूची नं० १ में प्रकाशित बिक्रीकी चीजोंमें कुछकी खरीद के भावका पता और लगता है वह बहीकी पृष्ठ संख्या सहित नीचे लिखी जाती है:—

सूची नं० ३ (खरीद)

पृष्ठ	८	१)	रु० का	गुड़ २४॥। सेर
„	„	१)	„	„ २४ „
„	„	।-)	„	„ ८ „
„	३१.	२॥-)॥	„	लाख* ॥ मन, दर ५७) मन
„	३१	१=)॥१२	„	लोहा ा६॥।= दर २॥।) मन
„	३६	६॥।=)६	„	„ १ मन
„	८	२)	„	शक्कर १ मन ३ सेर
„	„	२)	„	„ ३६ सेर
„	३६	१)६	„	„ १६॥ सेर

सूचीनं० १, २ और ३ में जिन चीजोंके नाम आदि प्रकाशित हो चुके हैं उनके सिवाय जो और नाम पृष्ट ८से ३६के बीचमें पाये गये, उनकी सूची नीचे दी जाती है।

---

* ठीक नहीं पढ़ा जाता इस लिये कहा नहीं जा सकता कि यह लाख है या अन्य कोई चीज।

सूची नं० ४—(खरीद)

।)३ *	चना	१३॥ सेर
।)३	दाना	७। „
॥⁄)३	„	७।⁄ „ दर १३ सेर
१)१२॥	गेहूं	१ मन १०॥ सेर
१)१२॥	„	१ मन ८॥। „
।)३	भाग	१५ सेर
१॥।)	सोंठ	८॥। सेर, दर ८)
१।ॽ)	हल्दी	१० सेर, दर ५॥)
१)१२॥	जौ	१॥ मन
२)१२॥	रूई	५६॥ दर रुपयेकी ५४॥।
१६॥⁄)	आल (एक रंग)	३ मन
१।ॽ)३१	तम्बाखू	२० सेर, दर २॥ॽ)१।१५
२॥।)१६	मिर्च (लाल)	३३।ॽ सेर, दर १२ सेर
२॥।)	„ „	२७ सेर, दर ६॥ सेर
⁄)	चावल	१ सेर
१)६	„	१३। सेर
॥।)	सिंघाड़ा	२० सेर
१)६	मली ?	२५॥ सेर
)॥।	कुचला	१० सेर

*संख्या ३ दामकी है।

सूची नं० ५—(बिक्री)

१)१२॥ गेहूं १ मन ६॥ सेर
१)१२॥ ,, १ मन ३ सेर
।)॥ गोंद २ सेर
।) अजवाइन २॥ सेर
॥≈) ,, १० सेर, दर २॥)।
१॥≋)॥ आल १० सेर दर ६॥।≠)
७≋)१५ ,, ३४॥।≠ सेर, दर ८।)
)१।२५ लूण (नमक) १०॥ सेर

ऊपर लिखे नामोंके सिवाय कुछ नाम और भी पाये जाते हैं किन्तु वे ठीक पढ़े नहीं गये। मजीठ और सनाय नाम भी पढ़नेमें आये पर उनके दर दाम नहीं मिलते।

हुण्डिको नकल।

वहीमें कुछ हुण्डियोंकी नकल भी पायी जाती है। जिससे उस समयके हुण्डीके बट्टे आदिका बहुत कुछ पता लगता है। कुछ हुण्डियोंकी नकल ज्यों कि त्यों नीचे दी जाती है।

१०७।≠) हुण्डी १ रुपये १००) बालचन्द चैनसुख ऊपर लिखी बालकिशन मनसुखकी मिति आषाढ़ वदी १४से दिन११ रखा गोपीराम गिरधारी लालका सम्वत् १८४४

बालकिशन मनसुखका जमा दर ७।≈)

७।≈) हुण्ड्यावणका

२१४॥।)॥ हुण्डी १ रुपया २१४॥।)॥ की गुलाबराय भानी सहाय ऊपर लिखी टेकचन्द ठण्डीरामका रखा टेकचन्द बन्धेलीका मित्ती सावण सुदी ३ से दिन ११ का।

१००) हुण्डी १ रुपया १००) भोजराज चतुर्भुज ऊपर लिखी विकानेरकी जीवराज अजराज रखा किरपा आगरेवाले पास हस्ते * * * * मित्ती आस्योज सुदी ८ से दिन २१ दर ६॥ॽ)

७०) हुण्डी १ विसाऊ ऊपर दयाराम साह ऊपर लिखी गोपीराम गिरधारीलालको रखा जगरूप कोठारी-का मित्ती मंगसर सुदी ८ से दिन १७ पिछे साह जोग दर ६।)

जगरूप कोठारीके नामे टेकचन्द बन्धेलीका जमा।

टेकचन्द रखत मिरजापुर चलत विसाऊ ऊपर।

सब हुण्डियोंकी नकल देनेसे लेख और भी बड़ा हो जायगा इसलिये बाकी हुण्डियोंके बट्टेका भाव नीचे दिया जाता है। स्मरण रहे कि नीचे लिखी सब हुण्डियां ११ दिन मुद्दतकी हैं।

७५)	रु०	की	१ हुण्डीके	२॥ॽ)	हुण्डयावण
८०)	„	„	„	३॥)	„
५०)	„	„	„	१ॽ)	„
२५)	„	„	„	१।)	„
७५)	„	„	„	४॥ॽ)	„

पहले कहा जा चुका है कि वही ५० पत्रोंकी है। इतनी बड़ी वहीका लेखा यदि इस लेखमें दिया जाय तो देवनगरके एक पूरे अङ्कमें भी अटना मुशकिल होगा। इसलिये, जहांतक हो सका संक्षेपसे उसका आभास दिया गया। तो भी लेख बहुत बढ़ गया है। अब वहीसे केवल एक विवाहके खर्चकी सूची उद्धृत कर यह लेख समाप्त किया जायगा।

सूचीसे उस समयके विवाहके खर्च और गहने कपड़े चीज और रस्म-रिवाज आदिका बहुत कुछ पता लगता है। सूची गिरधारी लालके छोटे भाई जालीरामके विवाहके खर्चकी है। सुना है, कि इस विवाहके गहने और कपड़े देखनेको बहुत लोग आये थे और सबने प्रशंसा करते हुए कहा था कि 'इनके यहां ऐसे गहने कपड़े क्यों न हों जिनकी छः छः दूकानें चलती हैं!'

सगाईकी * गहने।

वही पृष्ठ ६ से :—

"व्योरा चि० जालीरामकी बहुके गहना घाल्या (भेजा) सम्वत् १८५२।

१५) पाजेब जोडी १, भरी २३ रूपेकी †।

* विवाहके कुछ काल पूर्व जो विवाहकी बात पक्की हो जाती है उसे मारवाड़ी लोग 'सगाई' कहते हैं। दूसरी और जातियोंमें भी यह चाल टीकेके नामसे मशहूर है।

† रूपा—चांदी और सीसा मिलाकर तैयार होता था।

४) चोटी* १, भरी ६ रूपेकी ।

४) पछेली (हाथमे पहननेकी) जोड़ी १, भरी ६ रूपेकी ।

१४)१४।२५ तोड़िया (पांवमें पहननेके) जोड़ी १, भरी २१ रूपेका ।

८) वाली नग ६, सोनेकी वजन ७ मासा १ रत्ती ।

४५)१४।२५

विवाहका खर्च ।

वही पृष्ठ ११ से :—

"लेखो चि० जालीडके व्याहको मिती वैसाख सुदी १ सम्वत् १८५६ खर्चका लगा इस भांति :—

५७) गहनेकी लागत । जुमले रु० १०२) बाद रु०४५) का गहना सगाईमें घाल्या† ।

४॥) तोड़ियोंको बढ़ाकर भरी २६ किया ।

३॥) रूपा भरी ५ ।

१) गढ़ाई ।

४॥)

* चोटी—एक तरहका लटकननुमा गहना होता था, उसमें घूंघरू लगे रहते थे। यह शिरकी गुथी हुई चोटीके अन्तमें लटकाया जाता था। आजकल उसकी चाल उठ गयी है।

† सगाईके समय जो गहना वर पक्षवाले कन्याको चढ़ाते हैं वह विवाहके कुछ पहले वापिस आ जाता है और आवश्यकतानुसार उसे मरम्मत या बढ़वाकर फिर विवाहमें दिया जाता है उसी प्रथाके अनुसार ४५)रु० सगाईके समयके और ५७) रु० विवाहके कुल १०२) हुये।

७) चोर १ (सिरपर लगानेका) गजशाहीमें लिया।

२६) पंचलडी* नग १, सोना मांसा २१ गजशाहीकी।

खरीदी आसारामके वेटे हिम्मतसे, व्योरा :—

२॥।)१ मादली ६

२॥।)१ टिकडा २

२।१ मणिपन्नेकी १

१ विलडी।१

१४)१ मणिया २६०

२२)१॥

१)१॥ बाद कसरका

२१) बाकी रहा दर १६॥) जिसका दाम २६)॥ हुआ, बाद)॥। छूटका गया

१॥) आरसी नग १ पूज्यः माजीकी।

८) नथ १ पुज्य· माजीकी।

४) सोना मासा ३।

४) मोति जोडी १।

८)

* पचलडी—एक तरहका गलहार होता था। सुना है, उस समय यह गहना जिसके यहां होता वह बहुत बड़ा आदमी समझा जाता था।

२) रूपा मासा ३० ।

२० झालरो आंसु झावी ।

१० बींटो तथा पाजेबके घूंघरू लगाया ।

५) हथ साकलो, मु ंह दिखायींमें ।

३) हमारे घरका ।

१) नानोंका ।

१) जीतली बाईका ।

५)

५७)

३।॰)॥ रंगत ।

२॥)। कसूंभा ।

१)२५ सेर ६

॥॰)॥ „ ४॥॰ विसाउके तौलका

।) „ १॥

२॥)।

॥॥)। अमचूर

॥-) सेर २। रागमढ़के तौलका

॰)। „ ॥ दर रु० का ५ सेर

॥॥)।

॥) हलदी तथा रंगाईका ।

३।॰)॥

६।≈)॥ कपड़ा ।

२।≈)॥ धोती जोडा २ । १—१) १—१≠) ॥

१) सेला* थान १॥ ओढ़णी चूंदड़िया ।

१≈) सेला थान १ ओढणी १

॥≈) सेला थान १ हाथ ६

१) सेला थान १ हाथ १२॥ घरका लगा ।

६।≈)॥

१॥) धोती जोड १ रामनाथ पोद्दारका परोतमें आया ।

३≶) किनारी गोटा । ओढना १ गोटेका किया ।

२।) किनारी सुर्ख

॥≶) गोटा

३≶)

१॥≈)॥ मेवा ।

॥)	मिसरी	सेर	२॥
।≠)	बादाम	,,	१॥
।)।	छुहारा	,,	१।
≈)।	दाख (किशमिश)	,,	॥
।≈)	गरी	,,	१॥

१॥≈)॥

* उस समय आशिर्वादमें कहा जाता था 'सेला, बाफता, पहरो चावल दाल खावो।'

॥≡) पांड़ (चीनी) सेर ५

≡)॥ रूई सेर १॥ नालके तांई (मौलीके लिये)

।)६ मूंग मन १ सेर ५

॥) नारियल नग ६

॥) चावल सेर १०

॥) तेल सेर ११

१॥) घी सेर १२

।) चावल सेर ७॥ साठी

१)१६ गेहूं मन १॥ मिती वैसाख वदी ३

।≠) तिल मन ॥ चायके तांई *

१)५।१२ जूता जोड़ी ३ कराया ।

१ घरके तांई

१ बाई जीतलीके तांई

१ बींद (दुलहा) के तांई

२४॥≡)॥ टका खरीदा नौरंग शाही ।

१०।≡)॥ खेरूंज (फुटकर) लिया

॥-)॥ टका २५

१) टका १६

२) टका ५८

६॥≈) „ ११६

१०।≡)॥

---

* चाय—एक प्रथाका नाम है। विवाहके समय विरदारीमें तिल चावल या बताशे बांटे जाते हैं उसे चाय कहा जाता है।

५) टका पहले दिया * * * के तांई
१) नौरंगसाही
५) टका
३॥) टका

२४॥ॐ)॥

॥॰) भाडेका दिया, बाई जीतली फतेपुरसे आयी ।

११ॐ) फुटकर पैसे लगे—

२५ पोस्त लाये
३१ लकडीका
४। बींदके तांई मैंहदी मंगायी
१। मालीको दिया
१)१२ बाजरा मन ३। बैसाख वदी १०
२। कवलकनतका (?)
१)१२ घी सेर ८
१) भात (मायरा) न्योतने गये जिसका
५।१६ अरघूं षां तेलिको
३४ लकड़ी मोट २
४। भरिया (पानीभरनेवाला) को दिया
कुल ॥) बाद ॥) पहले दिये ।

॥)॥ रेजा थान १ पिरोतमें
१) टका १६ * * *
१०।१५ दरजीको कपड़ा सिलायीका

२। * * *
५) डेडिय ब्राह्मणको रोकड़ी गजशाही

६।।)३१।२४

११७)५।३७

३) रामसुर्पीके सासरे लगा

२।) हांस(मिलनी) का रुपया ३ पुणिया* ।
॥) पत्तलमें ।

३)

१२०)५।३७

यह विवाहके खर्चकी सूची हमारे भाइयोंका बड़ा ही मन रंजन कर रही होगी। कितनोंको हंसी भी आती होगी। एक बड़े घरके विवाहका कुल खर्च १२०)५।३७ (एक सौ बीस रुपये पांच टके सैंतीस दाम) आश्चर्य्यजनक लगते होंगे। किन्तु उस समय खान पानकी चीजें जितनी सस्ती थीं उसे देखते यह रकम बहुत कम नही हैं। आज तो उतनी चीजें उससे दस गुने रुपयों पर भी मिलना कठिन है। सूची से एक बातका पता और भी लगता है कि उस समयके लोग हिसाब कैसा ब्योरेवार रखते थे। पाई पाईका हिसाब इसीका नाम है। स्मरण रहे कि इस पुस्तकमें छपी सूचीसे बहीमें लिखी सूचीमें और भी कुछ अधिक शब्द या ब्योरा था पर ठीक पढ़ा न जानेसे छोड़ देना पड़ा। जिनके यहांसे चीजें खरीदकर लायी गयी थी उनके नाम भी थे। वह भी छोड़ दिये गये।

* उस समय पौन रुपया भी होता था।

ऐतिहासिक लेख ।

चूरूकी बही (पृष्ठ ११)

२। * * *

५) डेडिय ब्राह्मणको रोकड़ी गजशाही

६॥)३१।३४

११७)५।३७

३) रामसुखीके सासरे लगा

२।) हांस(मिलनी) का रुपया ३ पुणिया* ।

॥) पत्तलमें ।

३)

१२०)५।३७

यह विवाहके खर्चकी सूची हमारे भाइयोंका बड़ा ही मन रंजन कर रही होगी। कितनोंको हंसी भी आती होगी। एक बड़े घरके विवाहका कुल खर्च १२०)५।३७ (एक सौ बीस रुपये पांच टके सैंत्तीस दाम) आश्चर्य्यजनक लगते होंगे। किन्तु उस समय खान पानकी चीजें जितनी सस्ती थी उसे देखते यह रकम बहुत कम नहीं हैं। आज तो उतनी चीजें उससे दस गुने रुपयों पर भी मिलना कठिन है। सूची से एक बातका पता और भी लगता है कि उस समयके लोग हिसाब कैसा व्योरेवार रखते थे। पाई पाईका हिसाब इसीका नाम है। स्मरण रहे कि इस पुस्तकमें छपी सूचीसे बहीमें लिखी सूचीमें और भी कुछ अधिक शब्द या व्योरा था पर ठीक पढ़ा न जानेसे छोड़ देना पड़ा। जिनके यहांसे चीजें खरीदकर लायी गयी थी उनके नाम भी थे। वह भी छोड़ दिये गये।

* उस समय पौन रुपया भी होता था।

ऐतिहासिक लेख ।

चूरूकी वही (पृष्ठ ११)

ऐतिहासिक लेख।

महाराज रत्नसिंहजीका पत्र।

बड़े लाट

लार्ड आकलैंडको हिन्दीमें पत्र*।

कलकत्तेके बृहत् सरकारी पुस्तकालय (इम्पिरियल लाइब्रेरी) की नुमायशी आलमारियोंमें एक हिन्दी-पत्र सजा हुआ रक्खा है। पत्र बहुत चटकीला और मनोहर है। सुन्दर नेपाली कागजके चारों ओर सुनहली पट्टीपर पँचरंगे बेल-बूटों की चित्रकारीकी हुई है। अक्षर नागरी और भाषा हिन्दी, मारवाड़ी चालकी है। मैं उसे सहजही पढ सका। उसमें पत्र-प्रेषक का नाम महाराजाधिराज राजराजेश्वर-शिरोमणि श्रीरत्नसिंहजी लिखा है। पर स्थानका नाम नहीं। इसलिए मुझे यह जानने की बड़ी उत्कण्ठा हुई कि यह किस राजाका भेजा हुआ पत्र है। मैंने तत्कालीन पुस्तकाध्यक्ष अनेक-भाषाविद् स्वर्गीय बाबू हरिनाथ दे महोदयसे उक्त पत्र-सम्बन्धी विशेष बातें जाननेकी इच्छा प्रकटकी। पत्र आलमारी खोलकर निकाला गया। उसके साथ एक लिफाफा और मिला। उसपर उन्हीं नागरी अक्षरोंमें बड़े लाटका नाम था। इसके सिवा अँगरेजीमें इतना और भी लिखा था:—"एन० डब्ल्यू० पी० के छोटे लाटके सेक्रेटरीके दफ्तरसे २ जुलाई १८३६ ई० को रवाना होकर यहां १५

---

* यह लेख सरस्वतीमें प्रकाशित हुआ था।

ऐतिहासिक लेख।

महाराज रत्नसिंहजीका पत्र।

बड़े लाट

लार्ड आकलैंडको हिन्दीमें पत्र*।

कलकत्तेके वृहत् सरकारी पुस्तकालय (इम्पिरियल लाइब्रेरी) की नुमायशी आलमारियोंमें एक हिन्दी पत्र सजा हुआ रक्खा है। पत्र बहुत चटकीला और मनोहर है। सुन्दर नेपाली कागजके चारों ओर सुनहली पट्टीपर पँचरंगे बेल-बूटों की चित्रकारीकी हुई है। अक्षर नागरी और भाषा हिन्दी, मारवाडी चालकी है। मैं उसे सहजही पढ सका। उसमें पत्र प्रेपक का नाम महाराजाधिराज राजराजेश्वर-शिरोमणि श्रीरत्नसिंहजी लिखा है। पर स्थानका नाम नहीं। इसलिए मुझे यह जानने की बडी उत्कण्ठा हुई कि यह किस राजाका भेजा हुआ पत्र है। मैंने तत्कालीन पुस्तकाध्यक्ष अनेक भाषाविज्ञ स्वर्गीय बाबू हरिनाथ दे महोदयसे उक्त पत्र सम्बन्धी विशेष बातें जाननेकी इच्छा प्रकटकी। पत्र आलमारी खोलकर निकाला गया। उसके साथ एक लिफाफा और मिला। उसपर उन्हीं नागरी अक्षरोंमें बडे लाटका नाम था। इसके सिवा अँगरेजीमें इतना और भी लिखा था —"एन० डब्ल्यू० पी० के छोटे लाटके सेक्रेटरीके दफ्तरसे २ जुलाई १८३६ ई० को रवाना होकर यहा १५

---

* यह लेख सरस्वतीमें प्रकाशित हुआ था।

जुलाईको मिला" *। लिफाफेके पीछे एक मोहर फारसीमें है, पर उसमें भी देशका नाम नहीं केवल—"रतनसिंह बहादुर महाराजाधिराज राजराजेश्वर"—लिखा है; और साथ ही २४०३ अङ्क लिखे हैं, जिसका मतलब कुछ समझमें न आया। इसके सिवा उर्दूमें चार पांच जगह तारीख आदि है, जो एन० डबल्यू० पी० के सेक्रेटरीके दफ्तरके सङ्केत जान पड़ते हैं। उनमें एक जगह 'राजपूताना नागरी' भी लिखा है।

मैंने पुस्तकाध्यक्ष महोदयसे पुस्तकालयके दफ्तरमें और खोज की जानेका अनुरोध किया; पर बहुत खोज करनेपर भी पत्रके सम्बन्धमें और कोई बात न मालूम हुई। लाचार, मैंने उनसे पत्रका एक फोटो लेनेकी प्रार्थना की। इस बातको उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया।

इस पत्रसे यह प्रमाणित है कि सत्तर अस्सी वर्ष पहले बड़े लाट तकको हिन्दीमें पत्र लिखे जाते थे। और तारीफ यह कि अंगरेजी पत्रके उत्तरमें हिन्दी। इसके सिवा उस समय सरकारी और देशी राज्योंमें उर्दूका जैसा जोर था उसके रहते हिन्दीमें पत्र लिखना महाराज रत्नसिंहजीका हिन्दी पर विशेष प्रेम प्रकट करता है। और महाराज अपना गौरव कैसा समझतेथे, यह पत्रकी भाषा और विशेषणोंसे भली भांति प्रकट होता है। और वह पत्र लाट साहबकी दृष्टिमें भी महत्वका समझा गया था, नहीं तो उसे इतने यत्नसे अबतक नहीं रक्खाजाता। अस्तु।

---

* Transferred from the Secretary to Lt. Governor, N.W. P., 2nd July 1836. Received 15th July.

इस पत्रको देखनेसे एक बात यह भी जानी जाती है कि हमारे देशके बने रङ्ग और स्याही कितनी अच्छी होती है और कितने दिन तक रहती है। अस्सी वर्षका पत्र मानों कलका लिखा जान पड़ता है। कहीं फीकापन नहीं। पर इसी पत्र पर अंगरेजीकी जो दो लाइन हैं उनकी स्याही उड़कर लाल पड़ गई है!

इतिहाससे जाना जाता है कि उस समय बीकानेरके सिंहासन पर श्रीमान् महाराज रत्नसिंहजी सुशोभित थे। इससे सिद्ध है कि यह पत्र उन्हींका है। पत्रकी भाषा भी इस बात की पुष्टि करती है।

फोटोमें इस पत्रको पढ़नेमें शायद कष्ट हो। इस कारण इसकी याथातथ्य नकल नीचे दी जाती है। साथही फोटो भी इसका अलग प्रकाशित किया जाता है।

महाराज रत्नसिंहजीके पत्रकी नकल।

॥ श्रीरामजी ॥

स्वति श्री सरवओपमा विराजमान असरफुल ऊमराव नवाब लारद गवरनर जनरल श्री आकलंट साहब बहादुर जोग महाराजाधिराज राजराजेस्वर सिरोमणि श्रीरत्नसिंघजी लियावतं जुहार बाचसी अठेरा समंचार श्रीजीरी सुनजर सूं भला छै राजरा सदा भला चाहीजे आप बडा छौ सदा सनेह व ईपलास रापीं छौ जिण सैं जियादा रापसी अप्रंच अयार राजका परीता अंगरेजी लिपा हुवा मुनजमन तसरीफलाना आपरा बीच

फलकत्तेके करनैल नयांनोथल वीस साहब बहादरकी मारफत आया सो जिसके देषनें सें अर मजमूनके पढ़नेंसें चस्मां कुं अर दिल कुं निहायत रोसनी अर षुसी पेदा हुई श्रो जो महाराज आप कुं इस जिलेमें आणेंका बहोत मुबारक अर षुस वकत रषै हम कूं ऊमेद है के आपकी मुलाकात सें षुसी हासल होय लेकन ये बात मूकूफ ऊपर वषतके है हमेसें आपका मिजाज मुबारक की षुसषबरी अर हिय लायक काम काज होय सो लिषा करौंगे समत् १८६३रा मीती असाढ़ प्रथम बदी ४।

नोट—पत्रमें 'ख' को शकल 'ष' और श, ष, स, के स्थान केवल दन्त 'स' का प्रयोग किया गया है। पुराने कागज पत्रोंमें बहुत जगह इसी तरहका व्यवहार पाया जाता है।

राजा हरिसिंहजी का पत्र।

(सरस्वतीके भाग १३ संख्या १० से उद्धृत)

श्रीमान्!

अगस्त सन् १९१२ ई० की सरस्वती पत्रिका (संख्या ८) में—"बड़े लाट लार्ड आकलेंडको हिन्दीमें पत्र" यह हेडिंग देकर जो श्रीयुत रामकुमार गोयेनका महोदयने लेख छापा है उसमें श्रीमान् महाराज रत्नसिंहजी महोदयके पत्र (जो कि लार्ड आकलेंडको सेवामें उक्त महाराज साहबकी ओरसे भेजा गया था) का उल्लेख कर उसके विषयमें सन्देह प्रकट किया गया है, यद्यपि आगे चलकर इतिहासके प्रमाणसे यह लिख दिया है कि

"उस समय बीकानेरके सिंहासनपर श्रीमान् महाराज रत्नसिंहजी सुशोभित थे। इससे सिद्ध है कि यह पत्र उन्हींका है" इत्यादि।

इस विषयमें लेखकको तथा पाठकोंको किसी प्रकारसे सन्देह न रहे, अतः सूचित किया जाता है कि वह पत्र तत्कालीन बीकानेर-नरेश श्रीमान् महाराज रत्नसिंहजी महोदयका ही था कि जिसकी अक्षरशः कापी यहां राज्यमें मौजूद है।

किम्बहुना विज्ञे षु

कृपा कांक्षी—

राव-बहादुर राजा हरिसिंह

मेम्बर कौंसिल स्टेट, बीकानेर।

सैयरुल मुताखरीन।

भागलपुरके रईस जमींदार बाबू बंशीधर ढांढ़नियाकी कृपासे एक ऐतिहासिक फारसी पुस्तकके हस्त लिखित तीन खण्ड मुझे प्राप्त हुए हैं। तीनों खण्डोंपर पुस्तकका नाम "मिनहाजुल मुताखरीन" लिखा है। पुस्तक भागलपुरके एक सज्जन बाबू सागरमल खेमकाके पास थी। उनके पाससे किसी समय एक इतिहासप्रेमी गुणग्राहकने यह आठ सौ रुपयोंपर खरीदी थी। पर दैवचक्रसे उसकी अवस्था मन्द हो गयी और उसे वही पुस्तक फिर नाममात्र मूल्यपर विक्रेताके ही हाथ बेचनी पड़ी।

पुस्तकके तीन खण्डों में, पहलेमें कौरव पाण्डवोंसे लेकर औरङ्गजेबके समय तकका इतिहास है। दूसरे और तीसरेमें औरङ्गजेबसे लेकर बङ्गालके नव्वाब सिराजुद्दौलाके बाद तकका विस्तृत विवरण ग्रन्थकारने स्वयम् देखभाल और तलाशकर लिखा है। पहले खण्डमें ३२७, दूसरेमें ३१०; तीसरेमें ६५ पृष्ठ हैं। पृष्ठोंका आकार १२×१ इञ्च है।

इसके दूसरे खण्डका अंगरेजी अनुवाद 'सैर मुताखरीन' नामसे बङ्गालकी एशियाटिक सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हुआ था और उसकी दूसरी आवृत्ति भी हो चुकी है। पर अनुवादक महोदयने न तो उस अनुवादको दूसरे खण्डका बताया

है और न और दो खण्डोंका होना स्वीकार ही किया है। किन्तु पीछे सोसाइटीको उनका होना स्वीकार करना पड़ा है और अपने सूचीपत्र (कटलग) में मुताखरीनके विवरणके नीचे दवी ज़ुबानसे स्वीकार करना पड़ा है कि (No other volume is known to have been published) 'पता नहीं कि अन्य खण्ड प्रकाशित हुए हैं।' खैर यही सही!

मुताखरीनके पहले खण्डकी भूमिका आदिसे पुस्तकका जो परिचय फारसी भाषाविद् लाला राधामोहन गोकुलजीकी कृपासे पाया गया है, पाठकोंको दिया जाता है। आशा है कि इतिहास रसिक इससे आह्लादित होंगे, क्योंकि ऐतिहासिक जगतमें बहुतसी नयी बातें इसके द्वारा प्रकाश होंगी।

पहले ग्रन्थकारने पुस्तकके आरम्भमें ईश्वर और तदनन्तर बादशाह औरंगजेबकी प्रशंसा फारसीकी लेख-प्रणालीके अनुसार बड़े बड़े सुन्दर विशेषणोंसे करके अपना परिचय इस प्रकार दिया है—नाम, गुलाम हुसेन, बेटा हिदायत खाँका, पोता सैयद अलीमुल्लाह और पड़पोता सैयद फैज़ुल्लाहका। वंश हसन जो मुहम्मदकी लड़कीसे चला। पश्चात् पुस्तकका विषय बतलाया है जिसका अनुवाद यह है :—

द्वापरके अन्तमें कौरव पाण्डवसे लेकर मुहम्मद आलमगीर औरंगजेबके समय हिजरी ११०५ तक करीब ५ हज़ार वर्षमें जो बड़े बड़े शक्तिशाली हिन्दू राजा हुए हैं उनका, उनके आधीन राज्योंका, उनकी लम्बाई चौड़ाई चौहद्दी आदिका वर्णन इस

ियरूल मुताखरीनमें * किया गया है। पुस्तक नीचे लिखी
स्तकोंके आधारपर, उन पुस्तकोंकी फालतू बातोंको छोडकर
और सक्षेप करके लिखी गयी है।

(१) 'रजमनामा'—महाभारतका फारसी अनुवाद जो अकबर बादशाहके समय शेख अबदुल कादर बदायुनी और शेख मुहम्मद सुलतान थानेश्वरीने बादशाहकी आज्ञासे किया था और जिसकी भूमिका शेख अबुल फजलने बडी योग्यतासे लिखी थी।

(२) 'गुलफशा'—सिंहासन बत्तीसीका उल्था जिसमें विक्रमाजीतके समयकी बातें है।

(३) 'पदमावत'—जिसमें रायरतन सेन चितौडके रानाकी बातें हैं।

(४) 'राजावली'—जिसको मिश्र विद्याधर स्वामीने लिखा है, जिसमें भारतके राजाओंका वर्णन है, जिसका फारसी उल्था विनाहुरामने किया था।

(५) 'राजतरङ्गिणी'—जिसमें ४ हजार वर्षसे अधिकके गद्दी नरेशोंका वर्णन है और जिसका अनुवाद अकबर बादशाह

* इस भूमिकाके लेखके अनुसार तो अंगरेजी अनुवादकका पुस्तक का नाम 'सैयर मुताखरीन' रखना ही ठीक ज चता है पर जो पुस्तक मेरे सामने है उसके तीनों खण्डोंके प्रथम पृष्ठपर 'मिनहाजुल मुताखरीन' लिखा है। किन्तु दोनों नामोंके अर्थमें कुछ विरोध नहीं है। सैयरुल मुताखरीनका अर्थ पिछले जमानेका सैयर (दौरा, भ्रमण) और मिनहाजुल मुताखरीनका अर्थ पिछले जमानेका रास्ता (पथ), रीति है

के आदेशसे किया गया था। इसके सिवाय मुहम्मद गजनवी नासिरुद्दीन, सुबुक्तगीन और शहाबुद्दीन गोरी (कि जिनके समयसे हिन्दू राजाओंकी हुकूमत नष्ट हुई) सुलतान अलाऊद्दीन खिलजी, अफ़ग़ान बादशाहों और अमीर तैमुर गोरगानी और तैमूरके औलाद बादशाह बाबरसे लेकर दोनों आलमगीर और शाहजहा तकके बादशाहोंका वर्णन, उनके राजत्व कालकी बातें और गुजरात, सिंध, मुलतान, मालवा, दौलताबाद, दक्खिन, जौनपुर, बिहार, बंगाल और उड़ीसाके राजाओंकी बातें जो "सैयर मुल्क" नामक पुस्तकमें, जो हिन्दुस्तानकी तारीफमें लिखी गयी थीं, पायी गयीं उनसे इसके लिखनेमें सहायता ली गयी। पुस्तक कल्यब्द ४७९७, आलमगीर औरंगजेबके साल ४०, हिजरी ११०७, विक्रम १७५२ शालिवाहन १६१८में लिखी गयी।

उपर लिखी भूमिकाकी बातोंके सिवाय पुस्तकके १४ और १५ पृष्ठपर लिखित बंगालके राजाओंकी नामावली जो अबतक किसी इतिहासमें नहीं पायी जाती थी पाठकोंकी भेंट की जाती है ; इससे पुस्तककी उपयोगिता भली भांति प्रगट होगी।

१	राजा	सुखदत्त	२१८	वर्ष
२	„	अनङ्ग भीम	१७५	„
३	„	रणभीम	१०६	„
४	„	कुंजभीम	८२	„
५	„	देवदत्त	६५	„
६	„	जगसिंह	१०६	„

सैयरूल मुताखरीनमें * किया गया है। पुस्तक नीचे लिखी पुस्तकोंके आधारपर, उन पुस्तकोंकी फालतू बातोंको छोड़कर और संक्षेप करके लिखी गयी है।

(१) 'रजमनामा'—महाभारतका फारसी अनुवाद जो अकबर बादशाहके समय शेख अबदुल कादर बदायुनी और शेख मुहम्मद सुलतान थानेश्वरीने बादशाहकी आज्ञासे किया था और जिसकी भूमिका शेख अबुल फजलने बड़ी योग्यतासे लिखी थी।

(२) 'गुलफशां'—सिंहासन बत्तीसीका उल्था जिसमें विक्रमाजीतके समयकी बातें हैं।

(३) 'पदमावत'—जिसमें रायरतन सेन चितौड़के राणाकी बातें हैं।

(४) 'राजावली'—जिसको मिश्र विद्याधर स्वामीने लिखा है, जिसमें भारतके राजाओंका वर्णन है, जिसका फारसी उल्था बिनाहुरामने किया था।

(५) 'राजतरङ्गिणी'—जिसमें ४ हजार वर्षसे अधिकके गद्दी नरेशोंका वर्णन है और जिसका अनुवाद अकबर बादशाह

* इस भूमिकाके लेखकके अनुसार तो अंगरेजी अनुवादकका पुस्तकका नाम 'सैयर मुताखरीन' रखना ही ठीक जंचता है पर जो पुस्तक मेरे सामने है उसके तीनों खण्डोंके प्रथम पृष्टपर 'मिनहाजुल मुताखरीन' लिखा है। किन्तु दोनों नामोंके अर्थमें कुछ विरोध नहीं है। सैयरूल मुताखरीनका अर्थ पिछले जमानेका सैयर (दौरा, भ्रमण) और मिनहाजुल मुताखरीनका अर्थ पिछले जमानेका रास्ता (पथ), रीति है

के आदेशसे किया गया था। इसके सिवाय मुहम्मद गजनवी नसिरुद्दीन, सुबुकगीन और शहाबुद्दीन गोरी (कि जिनके समयसे हिन्दू राजाओंकी हुकुमत नष्ट हुई) सुलतान अलाऊद्दीन खिलजी, अफगान बादशाहों और अमीर तैमुर गोरगानी और तैमूरके औलाद बादशाह बाबरसे लेकर दोनों आलमगीर और शाहजहा तकके बादशाहोंका वर्णन, उनके राजत्व कालकी बातें और गुजरात, सिंध, मुलतान, मालवा, दौलताबाद, दक्खिन, जौनपुर, विहार, बंगाल और उड़ीसाके राजाओंकी बातें जो "सैयर मुल्क" नामक पुस्तकमें, जो हिन्दुस्तानकी तारीफमें लिखी गयी थीं, पायी गयीं उनसे इसके लिखनेमें सहायता ली गयी। पुस्तक कल्यब्द ४७९७, आलमगीर औरंगजेबके साल ४०, हिजरी ११०७, विकम १७५२ शालिवाहन १६१८में लिखी गयी।

ऊपर लिखी भूमिकाकी बातोंके सिवाय पुस्तकके १४ और १५ पृष्ठपर लिखित बंगालके राजाओंकी नामावली जो अबतक किसी इतिहासमें नहीं पायी जाती थी पाठकोंकी भेंट की जाती है; इससे पुस्तककी उपयोगिता भली भांति प्रगट होगी।

१	राजा	सुखदत्त	२१८	वर्ष
२	"	अनङ्ग भीम	१७५	"
३	"	रणभीम	१०८	"
४	"	कुंजभीम	८२	"
५	"	देवदत्त	६५	"
६	"	जगसिंह	१०६	"

७	राजा	वृद्धसिंह	६७	वर्ष
८	”	मोहनदत्त	१०२	”
६	”	विनोदसिंह	६७	”
१०	”	शङ्कर सेन	६६	”
११	”	मित्रजीत	१०१	”
१२	”	भूपत	६०	”
१३	”	सिघ्रक	६१	”
१४	”	जयघ्रक	२१०	”
१५	”	उदयसिंह	८५	”
१६	”	विश्वसिंह	८८	”
१७	”	नेहनाथ	७१	”
१८	”	रिखदेव	८३	”
१६	”	रघुवल्लभ	७६	”
२०	”	जगजीवन	१०८	”
२१	”	कालदण्ड	८५	”
२२	”	कालदेव	६०	”
२३	”	विजयकरण	७१	”
२४	”	शिवसिंह	८६	”

४०६ वर्ष चौबीस क्षत्री घरानोंने राज्य किया ।

१	राजा	भोज कुरिया	७१	वर्ष
२	”	लालसेन	७०	”
३	”	माधो	६७	”
४	”	सम्बन्धभोज	४८	”

५	राजा	जयपत	५४	वर्ष
६	"	प्रभू	४६	"
७	"	करण	४६	"
८	"	लखन	४३	"
६	"	भोज	४६	"

४७० वर्ष तक नौ कायस्थ राजाओंने राज्य किया; फिर दूसरे कायस्थ घरानेमें राज्य चला गया :—

१	राजा	आदसोद	६६	वर्ष
२	"	जामीनोभाह	६६	"
३	"	अनरुध	७१	"
४	"	प्रतापरुद्र	५८	"
५	"	भूदत्त	६१	"
६	"	रिखदेव	५२	"
७	"	गिरधर	७१	"
८	"	पृथ्वीधर	६०	"
६	"	सृष्टिधर	५१	"
१०	"	प्रभाकर	५८	"
११	"	जयधर	२०	"

६३७ वर्ष ग्यारह राजाओंने पुश्त दरपुश्त राज्य किया, बाद कलना बोसके घरानेमें राज्य गया—

१	राजा	भूपाल	५५	वर्ष
२	"	दितरपाल	६५	"
३	"	देवपाल	८३	"

४	राजा	भवनपाल	७०	वर्ष
५	”	धनपतपाल	४'१	”
६	”	मक्खपाल	७'१	”
७	”	जयपाल	६८	”
८	”	राजपाल	६८	”
९	”	भोगपाल (राजपाल का भाई)	५	”
१०	”	जखपाल	७४	”

६६८ वर्ष दस राजाओंने राज्य किया ; बाद वह दूसरे कायस्थोंके घर गया :—

१	राजा	सुखसेन	३	वर्ष
२	”	वलावल सेन	५०	”
३	”	लखन	७	”
४	”	माधव सेन	१०	”
५	”	केशव सेन	१५	”
६	”	सदा सेन	१८	”
७	”	त्वच	३	”

१०६ वर्ष इन ७ राजाओंने पुश्त दर पुश्त राज्य किया था।

राजा सुणदत्त क्षत्रीके राज्याभिषेकसे लेकर ६१ हिन्दू राजा हुए। इन्होंने मुसलमानोंके उदयसे पहले ~ ~० वर्ष बंगा[illegible] राज्य किया। बंगालमें मुस[illegible]

[illegible]तुबुद्दीन अपयकके समय [illegible]

[illegible]तान मुहम्मद तुगलक तक [illegible]

यहा १५६ वर्ष तक राज्य किया। ७७१ हिजरीमें मलिक फक-रुद्दीन सिलाहदार सेनानायकने वागी होकर राज्य ले लिया। उससे दाऊद खाँ तक २२४ वर्ष बङ्गालका राज्य फिर स्वतन्त्र रहा। बाद ६६५ हिजरीमें अकबरके अमीरोंने बङ्गालको फतह करके दाऊद खाँको मार डाला। ६६५ हिजरीसे १७६ वर्ष बङ्गाल फिर दिल्लीके अधीन रहा। ११७४ हिजरीसे आज ११६७ हिजरी तक २३ वर्ष बीते हैं कि ईष्ट इण्डिया कम्पनीके हाथमेंयह राज्य है।

१ मलिक फकरुद्दीन सिलाहदार, २ वर्ष और कुछ महीने।
२ सुलतान अलाउद्दीन, १वर्ष कई महीने।
३ शमसुद्दीन बिङ्कर १७ वर्ष।
४ सिकंदर, शमसुद्दीनका बेटा, ६ वर्ष।
५ गयासुद्दीन, सिकंदरका बेटा, ७ वर्ष।
६ सुलतान सलातीन, गयासुद्दीनका बेटा, १० वर्ष।
७ शमसुद्दीन, ३ वर्ष।
८ काशी युमी, ७ वर्ष।
६ सुलतान जलालुद्दीन, ७ वर्ष।
१० सुलतान अहमद, बेटा जलालुद्दीन, १७ वर्ष।
११ नासिर, सुलतान अहमदका गुलाम ७ दिन।
१२ नासिर (शमसुद्दीनके घरानेका), २ वर्ष।
१३ बारबक शाह, १७ वर्ष।
१४ सुलतान युसुफ, ७ वर्ष।
१५ सिकदर शाह, ॥ दिन।
१६ फतह शाह, ७ वर्ष ५ महीने।

४	राजा	भवनपाल	७०	वर्ष
५	"	धनपतपाल	४१	"
६	"	मक्खपाल	७५	"
७	"	जयपाल	६८	"
८	"	राजपाल	६८	"
६	"	भोगपाल (राजपाल का भाई)	५	"
१०	"	जखपाल	७३	"

६६८ वर्ष दस राजाओंने राज्य किया ; बाद वह दूसरे कायस्थोंके घर गया :—

१	राजा	सुखसेन	३	वर्ष
२	"	बलावल सेन	५०	"
३	"	लखन	७	"
४	"	माधव सेन	१०	"
५	"	केशव सेन	१५	"
६	"	सदा सेन	१८	"
७	"	त्वच	३	"

१०६ वर्ष इन ७ राजाओंने पुश्त दर पुश्त राज्य किया था।

राजा सुखदत्त क्षत्रीके राज्याभिषेकसे लेकर ६१ हिन्दू राजा हुए। इन्होंने मुसलमानोंके उदयसे पहले ४३३० वर्ष बंगालमें राज्य किया। बंगालमें मुसलमानोंका राज्य दिल्लीके सुलतान कुतुबुद्दीन अयबकके समय सन् ५६८ हिजरीमें हुआ। तबसे सुलतान मुहम्मद तुगलक तक दिल्लीके सत्रह बादशाहोंने

यहां १५६ वर्ष तक राज्य किया। ७३१ हिजरीमें मलिक फ़क़-रुद्दीन सिलाहदार सेनानायकने बागी होकर राज्य ले लिया। उससे दाऊद ख़ाँ तक २२४ वर्ष बङ्गालका राज्य फिर स्वतन्त्र रहा। बाद ६६५ हिजरीमें अकबरके अमीरोंने बङ्गालको फतह करके दाऊद ख़ाँको मार डाला। ६६५ हिजरीसे १७६ वर्ष बङ्गाल फिर दिल्लीके अधीन रहा। ११७४ हिजरीसे आज ११६७ हिजरी तक २३ वर्ष बीते हैं कि ईष्ट इण्डिया कम्पनीके हाथमेंयह राज्य है।

१ मलिक फकरुद्दीन सिलाहदार, २ वर्ष और कुछ महीने।
२ सुलतान अलाउद्दीन, १ वर्ष कई महीने।
३ शमसुद्दीन विङ्कर १७ वर्ष।
४ सिकंदर, शमसुद्दीनका बेटा, ६ वर्ष।
५ गयासुद्दीन, सिकंदरका बेटा, ७ वर्ष।
६ सुलतान सलातीन, गयासुद्दीनका बेटा, १० वर्ष।
७ शमसुद्दीन, ३ वर्ष।
८ काशी युमी, ७ वर्ष।
६ सुलतान जलालुद्दीन, ७ वर्ष।
१० सुलतान अहमद, बेटा जलालुद्दीन, १७ वर्ष।
११ नासिर, सुलतान अहमदका गुलाम ७ दिन।
१२ नासिर (शमसुद्दीनके घरानेका), २ वर्ष।
१३ बारबक शाह, १७ वर्ष।
१४ सुलतान युसुफ, ७ वर्ष।
१५ सिकंदर शाह, ॥ दिन।
१६ फतह शाह, ७ वर्ष ५ महीने।

४	राजा	भवनपाल	७०	वर्ष
५	„	धनपतपाल	४५	„
६	„	मवखपाल	७५	„
७	„	जयपाल	६८	„
८	„	राजपाल	६८	„
६	„	भोगपाल (राजपाल का भाई)	५	„
१०	„	जखपाल	७५	„

६६८ वर्ष दस राजाओंने राज्य किया ; वाद वह दूसरे कायस्थोंके घर गया :—

१	राजा	सुखसेन	३	वर्ष
२	„	वलावल सेन	५०	„
३	„	लखन	७	„
४	„	माधव सेन	१०	„
५	„	केशव सेन	१५	„
६	„	सदा सेन	१८	„
७	„	त्वच	३	„

१०६ वर्ष इन ७ राजाओंने पुश्त दर पुश्त राज्य किया था।

राजा सुखदत्त क्षत्रीके राज्याभिषेकसे लेकर ६१ हिन्दू राजा हुए। इन्होंने मुसलमानोंके उदयसे पहले ४३३० वर्ष बंगालमें राज्य किया। बंगालमें मुसलमानोंका राज्य दिल्लीके सुलतान कुतुबुद्दीन अयवकके समय सन् ५६८ हिजरीमें हुआ। तबसे सुलतान मुहम्मद तुगलक तक दिल्लीके सत्रह बादशाहोंने

बङ्गालके दाऊदको मारकर यहां अपना अमल जमाया।

पुस्तकमें लिखित नामावलीका अनुवाद अत्यन्त शीघ्रताके साथ किया गया है। इससे सम्भव है कि, कहीं कहीं अनुवादकसे भ्रम हो गये हों। कारण जबतक कोई पुस्तक साद्यन्त नहीं पढी जाती तबतक उसका सम्बन्ध अच्छी तरह समझमें नहीं आता। आशा है, सहृदय पाठक इसके लिये क्षमा करेंगे। इतनी शीघ्रतामें लेख लिखनेका कारण इतिहासप्रेमियोंका ध्यान इस ओर आकर्षित करना है। इस पर इतिहासज्ञ पाठकोंकी सम्मति पानेसे लेखक कृतार्थ होगा। यदि यह पुस्तक और कहीं किसीके पास हो अथवा किसीके देखनेमें आयी हो तो वे उसका परिचय दें। ऐसा करनेसे इतिहासका बहुत उपकार होगा।

नोट—यह लेख प्रकाशित होनेपर विदित हुआ कि उक्त पुस्तकके तीनों खण्ड "सैरुल मुताखरीन" नामसे फारसी और उर्दू दोनों भाषाओंमें लखनऊके नवलकिशोर प्रेसमें छप चुके हैं। आश्चर्य है कि इतना होनेपर भी एशियाटिक सोसाइटीवालोंने उसके सब खण्डोंका पूरा अनुवाद नहीं निकाला और न उनका अस्तित्व ही स्पष्टतया स्वीकार किया। समझमें नहीं आता कि इन लोगोंने इस तरहसे भारतके इतिहासको चौपट करनेमें क्या लाभ समझा है? जो हो, अब समझमें आता है कि हस्तलिखित प्रतिआपर "मिनहाजुल मुताखरीन" नाम रखनेका उद्देश्य उसे नये नामसे अधिक मूल्यपर बेचनेका था।

१७ बारवक शाह, २॥ दिन।
१८ फीरोज शाह, ३ वर्ष।
१९ मुहम्मद शाह, बेटा फीरोज शाह, १ वर्ष।
२० मुज फर हबशी, ३ वर्ष ५ महीने।
२१ सुलतान अलाउद्दीन, २५ वर्ष कुछ महीने।
२२ नसीब शाह, बेटा अलाउद्दीन, ११ वर्ष।
२३ शेर शाह, समयका पता नहीं।
२४ हुमायु " "
२५ शेर शाह, (दूसरी बार) समयका पता नहीं।
२६ मुहम्मद खाँ, "
२७ बहादुर शाह, बेटा मुहम्मद खाँका "
२८ जलालुद्दीन, मुहम्मद खाका दूसरा बेटा, सनका पता नहीं।
२९ गयासुद्दीन समयका पता नहीं।
३० ताज शाह "
३१ सुलेमान "
३२ बायजीद "
३३ दाऊद "

कुतुबुद्दीन अयबकके समयसे दाऊद खा तक ५० राजाओंने बङ्गालमें राज्य किया था। इनमें सुलतान कुतुबुद्दीन अयबकसे सुलतान मुहम्मद तुगलक तक १७ राजा १५६ वर्ष तक दिल्लीश्वरके अधीन रहे। फकरूद्दीन सिलहदारसे दाऊद खा तक ३३ राजा २२४ वर्ष तक सम्पूर्ण स्वाधीन रहे। अनन्तर जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाहके अमीर दाऊद खा अफगानने

बङ्गालके दाऊदको मारकर यहा अपना अमल जमाया।

पुस्तकमें लिखित नामावलीका अनुवाद अत्यन्त शीघ्रताके साथ किया गया है। इससे सम्भव है कि, कहीं कहीं अनुवादकसे भ्रम हो गये हों। कारण जबतक कोई पुस्तक साद्यन्त नहीं पढी जाती तबतक उसका सम्बन्ध अच्छी तरह समझमें नहीं आता। आशा है, सहृदय पाठक इसके लिये क्षमा करेंगे। इतनी शीघ्रतामें लेख लिखनेका कारण इतिहासप्रेमियोंका ध्यान इस ओर आकर्षित करना है। इस पर इतिहासज्ञ पाठकोंकी सम्मति पानेसे लेखक कृतार्थ होगा। यदि यह पुस्तक और कहीं किसीके पास हो अथवा किसीके देखनेमें आयी हो तो वे उसका परिचय दें। ऐसा करनेसे इतिहासका बहुत उपकार होगा।

नोट—यह लेख प्रकाशित होनेपर विदित हुआ कि उक्त पुस्तकके तीनों खण्ड "सैयरुल मुताखरीन" नामसे फारसी और उर्दू दोनों भाषाओंमें लखनऊके नवलकिशोर प्रेसमें छप चुके हैं। आश्चर्य है कि इतना होनेपर भी एशियाटिक सोसाइटीवालोंने उसके सब खण्डोंका पूरा अनुवाद नहीं निकाला और न उनका अस्तित्व ही स्पष्टतः स्वीकार किया। समझमें नहीं आता कि उन लोगोंने इस तरह भारतके इतिहासको चौपट करनेमें क्या लाभ समझा है? जो हो, समझमें आता है कि हस्तलिखित प्रतिओंपर "मिनहाजुल मुताखरीन" नाम रखनेका उद्देश्य उसे नये नामसे अधिक मूल्यपर बेचनेका था।

ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी रचना।

यों तो महाभारतके समयसे पहले भारतवासियोंका समुद्र मार्गसे पृथ्वीके भिन्न भिन्न भागोंमें जाने आनेके वर्णन वैदिक ग्रन्थोंमें पाये जाते हैं। किन्तु उससे पिछले समयमें भी जब तक भारतवासी स्वाधीन थे, जबतक राजशक्ति उनकी पृष्ठ पोषक थी तबतक भारतके व्यापारिक जहाज पश्चिममें अफ्रीका और पूर्वमें चीन और जापान समुद्रतक सर्वत्र आते जाते थे, इसके प्रमाण अढाई हजार वर्ष पहलेके समयमें पाये जाते हैं। पर इससे भी पीछे, इन गये गुजरे (ईसवी दसवीं शताब्दी तकके) दिनोंमें भी समुद्रमार्गसे वाणिज्य करनेमें पृथ्वीकी और कोई जाति हिन्दू वणिकोंकी बराबरी नहीं कर सकती थी। उस समय यवद्वीप (जावा), वोर्नियो, सुमात्रा और मालय द्वीप पुञ्जमें हिन्दू वणिकोंकी जो बडी बडी वस्तियां हो चुकी हैं, उसके प्रमाण भी कुछ कम नहीं पाये जाते हैं। जावा द्वीपमें जानेवाले हिन्दू वणिकोंके जहाज आदिके शिला चित्र जो भिन्न भिन्न गुफाओंमें पाये गये हैं उनके छाया चित्र बङ्गालके राष्ट्रीय विश्वविद्यालयके इतिहास अनुसन्धानकारी रायचन्द प्रेमचन्द स्कालर श्रीयुक्त राधाकुमुद मुखोपाध्याय एम० ए० महोदयने गत मई और जून (१९१० ईसवी) मासके 'मोडर्न रिविउ' नामक अङ्गरेजी मासिक पत्रमें प्रकाशित कर इस विषय पर और भी उजाला डाल दिया है

ईसवी बारहवीं शताब्दीके अन्तिम भागमें भारत शासन मुसलमानोंके अधीन हुआ। तबसे मुसलमान वणिकोंकी बढती होने लगी और उन लोगोंने व्यवसायमें उन्नति कर ली। इससे जाना जाता है कि, राज्यशक्तिकी सहायताके बिना वाणिज्यादिमें उन्नति करना कठिन ही नहीं वरन् एक तरह असम्भव है। आजकल जर्म्मनीके वाणिज्यकी जो आशातीत उन्नति देख कर सबको चकित होना पडता है, वह भी, राज्यशक्तिकी पृष्ठपोषकता पर ही निर्भर करती है। हिन्दुओंकी राज्यपताका जिस दिन भारतपर फहरा रहा थी, उस दिन समस्त पृथ्वीपर हिन्दुओंके बाहुबल और वाणिज्यका जोर शोर था। जिस दिन हिन्दुओंकी राज्यशक्ति नष्ट हुई उसी दिनसे संसारमें हिन्दुओंके वाणिज्यका अध.पतन आरम्भ हुआ। समुद्रयात्रा द्वारा विदेशोंमें वाणिज्य करनेकी बात तो दूर रही अब तो भारतमें ही हिन्दुओंके वाणिज्यको बनाये रखना कठिन हो गया है! ईसवी पन्द्रहवीं शताब्दीसे दलके दल विदेशीय पुर्तगीज, डच (ओलन्दाज) अंगरेज फरासीसी आदि वणिक भारतमें अवतीर्ण होने लगे। किन्तु यह लोग भी राज्यशक्ति प्राप्त करनेके पूर्व यहा वाणिज्य विषयक प्राधान्य लाभ नहीं कर सके थे।

यूरोपियनोंमें सर्व प्रथम (सन् १४९८ ईसवीमें) पुर्तगालके वणिकोंने भारतके बन्दरमें पदार्पण किया। उस समय भारत, मिश्र और यूरोपका प्रायः समस्त वाणिज्य मुसलमान

ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी रचना।

यों तो महाभारतके समयसे पहले भारतवासियोंका समुद्र मार्गसे पृथ्वीके भिन्न भिन्न भागोंमें जाने आनेके वर्णन वैदिक ग्रन्थोंमें पाये जाते हैं। किन्तु उससे पिछले समयमें भी जब-तक भारतवासी स्वाधीन थे, जबतक राजशक्ति उनकी पृष्ठ-पोषक थी तबतक भारतके व्यापारिक जहाज पश्चिममें अफ्रीका और पूर्वमें चीन और जापान समुद्रतक सर्वत्र आते जाते थे, इसके प्रमाण अढ़ाई हजार वर्ष पहलेके समयमें पाये जाते हैं। पर इससे भी पीछे, इन गये गुजरे (ईसवी दसवीं शताब्दी तकके) दिनोंमें भी समुद्रमार्गसे वाणिज्य करनेमें पृथ्वीकी और कोई जाति हिन्दू वणिकोंकी बराबरी नहीं कर सकती थी। उस समय यवद्वीप (जावा), बोर्निओ, सुमात्रा और मालय द्वीप पुञ्जमें हिन्दू वणिकोंकी जो बड़ी बड़ी बस्तियां हो चुकी हैं, उसके प्रमाण भी कुछ कम नहीं पाये जाते हैं। जावा द्वीपमें जानेवाले हिन्दू वणिकोंके जहाज आदिके शिला चित्र जो भिन्न भिन्न गुफाओंमें पाये गये हैं उनके छाया चित्र बङ्गालके राष्ट्रीय विश्वविद्यालयके इतिहास-अनुसन्धानकारी रायचन्द प्रेमचन्द स्कालर श्रीयुक्त राधाकुमुद मुखोपाध्याय एम० ए० महोदयने गत मई और जून (१९१० ईसवी) मासके 'मोडर्न रिविउ' नामक अङ्गरेजी मासिक पत्रमें प्रकाशित कर इस विषय पर और भी उजाला डाल दिया है

ईसवी बारहवीं शताब्दीके अन्तिम भागमें भारत शासन मुसलमानोंके अधीन हुआ। तबसे मुसलमान वणिकोंकी बढ़ती होने लगी और उन लोगोंने व्यवसायमें उन्नति कर ली। इससे जाना जाता है कि, राज्यशक्तिकी सहायताके बिना वाणिज्यादिमें उन्नति करना कठिन ही नहीं वरन् एक तरह असम्भव है। आजकल जर्म्मनीके वाणिज्यकी जो आशातीत उन्नति देख कर सबको चकित होना पड़ता है, वह भी, राज्यशक्तिकी पृष्ठपोषकता पर ही निर्भर करती है। हिन्दुओंकी राज्यपताका जिस दिन भारतपर फहरा रहा थी, उस दिन समस्त पृथ्वीपर हिन्दुओंके बाहुबल और वाणिज्यका जोर शोर था। जिस दिन हिन्दुओंकी राज्यशक्ति नष्ट हुई उसी दिनसे संसारमें हिन्दुओंके वाणिज्यका अधःपतन आरम्भ हुआ। समुद्रयात्रा द्वारा विदेशोंमें वाणिज्य करनेकी बात तो दूर रही अब तो भारतमें ही हिन्दुओंके वाणिज्यको बनाये रखना कठिन हो गया है! ईसवी पन्द्रहवीं शताब्दीसे दलके दल विदेशीय पुर्तगीज, डच (ओलन्दाज) अंगरेज फरासीसी आदि वणिक भारतमें अवतीर्ण होने लगे। किन्तु यह लोग भी राज्यशक्ति प्राप्त करनेके पूर्व्व यहां वाणिज्य विषयक प्राधान्य लाभ नहीं कर सके थे।

यूरोपियनोंमें सर्व प्रथम (सन् १४९८ ईसवीमें) पुर्तगाल वणिकोंने भारतके बन्दरमें पदार्पण किया। उस समय मिश्र और यूरोपका प्रायः समस्त वाणिज्य मुसलमान

ायमें था। पुर्तगीज वणिकोंको कलिकट प्रदेशमें उपस्थित हुआ देख मुसलमान वणिक अधीर हो उठे; प्रतिद्वन्द्वी पुर्तगीज उनकी आंखोंमें कांटेसे खटकने लगे। सुतरां वह लोग ऐसी चेष्टा करने लगे जिसमें मुसलमान शासक भारतमें पुर्तगीजोंको वाणिज्य करनेका अधिकार न दें। मुसलमानोंकी इस काररवाईका सम्वाद पुर्तगालनरेशने सुनकर अपने लोगोंकी सहायताके लिये आग्नेयास्त्रसे पूर्ण कई रणपोत भारतमें भेजे। इन रणपोतोंके यहां पहुंचनेपर उनकी सहायतासे वह लोग समुद्रतीरस्थ कई स्थानोंपर छोटे छोटे देशी राजाओं और मुसलमान वणिकोंको दबाने और अपनी प्रधानता जमाने लगे और समय समयपर समुद्रमें डकैती करके अपना धनबल बढ़ाने लगे। इसके सिवाय पराजित शत्रुओंके असहाय लोगोंपर भीषण अत्याचार करके उन लोगोंने साधारण लोगोंके चित्तमें भय उत्पन्न कर दिया था। ऐसी घटनाओं द्वारा भारतमें पुर्तगीजोंके राज्य विस्तारके साथ साथ वाणिज्य-विस्तारके प्रमाण पाये जाते हैं।*

पुर्तगीजोंकी समृद्धि देखकर डच लोगोंने भी इधर पांव बढ़ाना आरम्भ किया। पुर्तगीजोंका समस्त व्यवसाय उनके राजाके अधीन था किन्तु डच वणिकोंने परस्पर सहकारिताके तत्वपर कम्पनियां बनायीं। कम्पनी बनाकर व्यवसाय रीति सबसे पहले इन्होंने ही निकाली। पुर्तगीजोंका राजकीय होनेके कारण उसके कार्य्य-कर्ताओंमें उतना उत्‍

* पण्डित सखाराम गणेश देउसकर कृत 'बाजीराव'।

और परिश्रम नहीं देखा जाता था जितना डच व्यवसाइयोंमें निज स्वार्थ-साधनकी चेष्टाके कारण देखा जाता था। इस लिये इनका व्यापार चमक उठा। ईसवी १५९५ से १६१० तक बहुतसी छोटी छोटी "डच ईष्ट इण्डिया कम्पनियोंने" व्यवसायार्थ भारतमें न्यूनाधिक १५ वार यातायात कर बहुत लाभ उठाया। इनका असाधारण लाभ देखकर अंगरेज और फरासीसियोंकी दृष्टि भी भारतकी ओर आकर्षित हुई। फरासीस वणिकोंने 'फ्रेञ्च ईष्ट इण्डिया कम्पनी' बनाकर ईसवी सत्रहवीं शताब्दिके प्रारम्भमें भारत आदि पूर्व देशोंमें व्यापार करना आरम्भ किया।

फरासीसी डुप्ले नामक एक सुचतुर नीतिज्ञने भारतके भिन्न भिन्न स्थानोंमें भ्रमण किया। वास्तवमें भारतमें फरासीस राज्य स्थापन करनेकी बात सबसे पहले उसीके मस्तिष्कमें उत्पन्न हुई।* उसी नीतिज्ञने कहा था कि, भारतका राज्याधिकार भारतवासियोंकी ही सहायतासे लेना होगा। भारतीय सिपाहियोंको यूरोपियन रीत्यानुसार फौजीशिक्षा देनी होगी; तब भारतका राज्य सहजही हस्तगत किया जा सकेगा। केवल युक्ति ही नहीं; कर्त्तव्यपरायण फरासीसियोंने अपनी असीम चेष्टासे उसे सफलताके द्वार तक पहुंचाया था किन्तु फ्रांस राज्यकी ओरसे—फरासीसी जातिकी ओरसे उन्हें उतनी सहायता न मिल सकी जितनी आवश्यक थी। इसके सिवाय वे अपनी युक्ति अपने पड़ोसी प्रतिद्वन्द्वी अनुकरण-पटु

* Malleson's History of French in India. pp. I to 4.

हाथमें था। पुर्तगीज वणिकोंको कलिकट प्रदेशमें उपस्थित हुआ देख मुसलमान वणिक अधीर हो उठे; प्रतिद्वन्द्वी पुर्तगीज उनकी आंखोंमें कांटेसे खटकने लगे। सुतरां वह लोग ऐसी चेष्टा करने लगे जिसमें मुसलमान शासक भारतमें पुर्तगीजोंको वाणिज्य करनेका अधिकार न दें। मुसलमानोंकी इस कारखाईका सम्वाद पुर्तगालनरेशने सुनकर अपने लोगोंकी सहायताके लिये आग्नेयास्त्रसे पूर्ण कई रणपोत भारतमें भेजे। इन रणपोतोंके यहां पहुंचनेपर उनकी सहायतासे वह लोग समुद्रतीरस्थ कई स्थानोंपर छोटे छोटे देशी राजाओं और मुसलमान वणिकोंको दवाने और अपनी प्रधानता जमाने लगे और समय समयपर समुद्रमें डकैती करके अपना धनबल बढ़ाने लगे। इसके सिवाय पराजित शत्रुओंके असहाय लोगोंपर भीषण अत्याचार करके उन लोगोंने साधारण लोगोंके चित्तमें भय उत्पन्न कर दिया था। ऐसी घटनाओं द्वारा भारतमें पुर्तगीजोंके राज्य विस्तारके साथ साथ वाणिज्य-विस्तारके प्रमाण पाये जाते हैं।*

पुर्तगीजोंकी समृद्धि देखकर डच लोगोंने भी इधर पांव बढ़ाना आरम्भ किया। पुर्तगीजोंका समस्त व्यवसाय उनके राजाके अधीन था किन्तु डच वणिकोंने परस्पर सहकारिताके तत्वपर कम्पनियां बनायीं। कम्पनी बनाकर व्यवसाय करनेकी रीति सबसे पहले इन्होंने ही निकाली। पुर्तगीजोंका व्यापार राजकीय होनेके कारण उसके कार्य्य-कर्ताओंमें उतना उत्साह

* पण्डित सखाराम गणेश देउसकर कृत 'बाजीराव'।

और परिश्रम नहीं देखा जाता था जितना डच व्यवसाइयोंमें निज स्वार्थ साधनकी चेष्टाके कारण देखा जाता था। इस लये इनका व्यापार चमक उठा। ईसवी १५६५ से १६१० तक बहुतसी छोटी छोटी "डच ईष्ट इण्डिया कम्पनियोंने" व्यवसायार्थ भारतमें न्यूनाधिक १५ बार यातायात कर बहुत लाभ उठाया। इनका असाधारण लाभ देखकर अंगरेज और फरासीसियोंकी दृष्टि भी भारतकी ओर आकर्षित हुई। फरासीस वणिकोंने 'फ्रेञ्च ईष्ट इण्डिया कम्पनी' बनाकर ईसवी सत्रहवीं शताब्दिके प्रारम्भमें भारत आदि पूर्व देशोंमें व्यापार करना आरम्भ किया।

फरासीसी डुप्ले नामक एक सुचतुर नीतिज्ञने भारतके भिन्न भिन्न स्थानोंमें भ्रमण किया। वास्तवमें भारतमें फरासीस राज्य स्थापन करनेकी बात सबसे पहले उसीके मस्तिष्कमें उत्पन्न हुई।* उसी नीतिज्ञने कहा था कि, भारतका राज्याधिकार भारतवासियोंकी ही सहायतासे लेना होगा। भारतीय सिपाहियोंको यूरोपियन शैल्यानुसार फौजीशिक्षा देनी होगी; तब भारतका राज्य सहजही हस्तगत किया जा सकेगा। केवल युक्ति ही नहीं; कर्त्तव्यपरायण फरासीसियोंने अपनी असीम चेष्टासे उसे सफलताके द्वार तक पहुंचाया था किन्तु फ्रास राज्यकी ओरसे—फरासीसी जातिकी ओरसे उन्हें उतनी सहायता न मिल सकी जितनी आवश्यक थी। इसके सिवाय वे अपनी युक्ति अपने पड़ोसी प्रतिद्वन्द्वी अनुकरण-पटु

* Malleson's History of French in India pp. 1 to 4

अंगरेजोंको भी बता चुके थे! इसीसे उनका सब बना बनाया काम चौपट हुआ। अंगरेजोंको फ्रांसकी युक्तिका पता तो लग ही गया था किन्तु अपनी कमजोरीके भयसे आगे बढ़नेका साहस नहीं होता था। परन्त फरासोसियोंको उनकी सरकारसे वा देशवासियोंसे सहायता पानेमें विलम्ब होते देख और काम बना बनाया जान यह लोग साहसके साथ बीचमें कूद पड़े और फरासीसियोंके परिश्रमका मीठा फल अल्पायासमें ही पा गये।

फ्रांसके भारतका राज्य न पानेका कारण अपनी जातीय पृष्ठपोषकता न पाना और अङ्गरेजोंके राज्य प्राप्त करनेका कारण उनकी जातीय पृष्ठपोषकता पाना ही समझा जाता है *। इसी सहायताका फल स्वरूप आज हम अंगरेजी साम्राज्य और वाणिज्यका भारतमें असीम विस्तार देख रहे हैं। यदि उस समय फरासीसगण स्वदेशसे पूरी मदद और सहानुभूति पाते तो आज भारतका इतिहास दूसरी ही तरह लिखा जाता! क्या उस भूलके लिये आज फ्रास देशीय लोगोंके हृदय टुकड़े टुकड़े नहीं होते होंगे? जरा उनके हृदयपर हाथ धरके देखना चाहिये।

इङ्गलैण्डके मुष्टिमेय सामान्य अङ्गरेज वणिक्-समुदायकी चेष्टासे किस प्रकार इतना बड़ा भारतीय साम्राज्य वा जगतव्यापी वाणिज्य प्रतिष्ठित हुआ उसका विवरण सुनने और ध्यानमें रखने योग्य है—विशेष कर व्यवसायी हिन्दुओंके लिये।

* Hunter's History of British Indir. Vol I. p. 9

व्यापार कितने महत्वकी चीज है वाणिज्य शक्तिसे राज्य शक्तिका कितना बडा सम्बन्ध है तथा नये नये और दूरदेशीय व्यापारोंमें पहले कितने कष्ट उठाने पडते हैं पश्चात् कितना लाभ या महत्व प्राप्त होता है, यह सभी बातें ईष्ट ईण्डिया कम्प नीके इतिहाससे पूरी तरह अवगत होंगी।

ऊपर कहा जा चुका है कि यूरोपीय जातियोंमें पुर्तगाल और डच लोगोंने भारतमें अङ्गरेजोंसे पहले पदार्पण किया, इस लिये भारतके पण्य द्रव्योंको यूरोपमें ले जाकर बेचनेके वही लोग अधिकारी हुए। इन दोनोंमें भी डच लोगोंके हाथमें अधिकाश वाणिज्य आगया था। इङ्गलैण्ड यूरोपके अन्तर्गत एक छोटासा टापू है। इङ्गलैण्ड भी भारतकी वस्तुओंके लिये इन्हीका मोहताज हुआ। भारतीय वाणिज्यके लिये इङ्ग लैण्डमें डचोंका कोई प्रतिद्वन्द्वी न रहा इसलिये उन्होंने मूल्य बहुत अधिक बढाकर वहा भारतीय चीजें बेचना आरम्भ किया। यहा तक कि जो मिर्च ७ शिलिङ्ग सेर* बिकती थी वह १२ शिलिङ्ग और कभी कभी १६ शिलिङ्ग तक भी बेचने लगे†। यह मूल्य क्या बढा मानो इङ्गलैण्डके निवासियोंको सोतेसे जगानेका कारण हुआ।

* इङ्गलैण्डमें पौण्डका वजन चलता है। एक पौण्ड ३८ भर अर्थात् प्राय आध सेरका होता है। इसके सिवा वहा एक सिक्केका नाम भी पौंड है, इससे भ्रमकी सम्भावना देख दो पौंड वजनके बदले एक सेरका प्रयोग किया है।

† Hunter Vol 1 p 241

इङ्गलैण्डके कुछ दूरदर्शी महानुभावोंने विचार कर देखा कि इस प्रकार दाम अधिक अधिक देकर माल खरीदने और परतन्त्रता भोगनेसे कबतक निर्वाह होगा ; अब भारतीय पण्य वस्तुओंको भारतमें स्वयम् जाकर लाये विना देशका कल्याण नहीं होगा। यही विचार अपने देशीय भाइयोंके सामने पेश करनेकी इच्छासे उन्होंने लण्डनमें वहाके मेयर-* के सभापतित्वमें एक सभा ता० २२ सितम्बर सन् १५६६ ई० को करवायी। सभामें देशके धन मान और व्यापारकी रक्षाके लिये भारत-यात्रा आवश्यक और उच्च नीति अनुकरणीय समझी गयी। परीक्षार्थ पहले केवल एक यात्रा करना निश्चय हुआ और उसके खर्च सामान आदिके लिये उपस्थित लोगोंने जो रकमें अपने हाथसे लिखीं उनकी कुल संख्या ३०,१६६ पौण्ड † ६ शिलिङ्ग ८ पेनी हुई।

उक्त रुपयोंकी सूची, जो कम्पनीके असली कागज-पत्रोंमें‡ पायी जाती है, देखनेसे विदित होता है कि १०१ मनुष्योंने उसपर हस्ताक्षर किये जिनमें १०० आदमियोंने सौसे तीन हजार पौण्ड तक अपने अपने इच्छानुरूप लिखे ; इनमें अधिक

---

* मेयर– मजिष्ट्रेट या शहर कोतवालके पदका नाम है।

† एक पौंड आजकल १५) रु० का होता है। पर कम्पनीके समय सोना सस्ता था इसलिये उस समय एक पौंड ५ या ६ रुपयेसे अधिकका न होगा। एक पौंडकी २० शिलिङ्ग होती है और १ शिलिङ्गकी १२ पेनी। एक पेनी हमारे एक आनेके बराबर होती है।

‡ Court Records of E. I Co pp 1 to 4

भाग दो दो सौ पौण्ड लिखनेवालोंका ही था। बाकी एकने नाम सही करनेपर भी रकम कुछ नही लिखी।

सूचीपर हस्ताक्षर करानेवालोंमें इङ्गलैण्डके लार्ड आदि किसी बड़े संभ्रान्त व्यक्तिका नाम देखनेमें नही आता, जिससे प्रत्यक्ष होता है कि अच्छे कामके आरम्भमें बड़े लोग सदाही उससे दूर रहते आये हैं। और रहें भी क्यों नहीं? क्योंकि उन्हें किसी बातका कष्ट तो है ही नही जो दूसरे कष्ट पानेवालोंकी पीड़ाका अनुभव कर सकें। उन्हें न धनकी कमी है जो किसी वस्तुके अधिक दाम देने अखरें; बल्कि कितने धनी लोगोंको तो मंहगी चीजें अधिक प्रिय मालूम होती हैं। फिर ऐसे कामोंमें उनसे सहायताकी आशा करना विड़म्बना नहीं तो और क्या है?

पर अच्छे कामोंका मददगार ईश्वर होता है। उसकी मददसे असमर्थ, गरीब, निर्द्धन भी बड़े बड़े काम करनेमें समर्थ होते हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण कम्पनीकी सूची है। सूची पर सही करनेवालोंमें अधिकतर पंसारी, कुञ्जड़े, जुलाहे, बजाज, कलाल, सुनार, लुहार, धोबी, छीपी, बढ़ई, चमार और छोटे छोटे दरजेके कुछ हाकिम आदि हैं। इन्हीं लोगोंकी सहायतासे देशके कुछ शुभचिन्तकोंने ईश्वरका नाम लेकर इस महत् कार्य्यको उठाया था।

यद्यपि इङ्गलैण्ड-निवासियोंके लिये भारतयात्रा किसी अनजान अन्धेरी जगहमें प्रवेश करनेके समान नहीं थी, स्पेन देशीय कोलम्बस (सन् १४६२) और पुर्तगीज वासकोडिगामा (सन्

१४६८) आदिको यात्राओं द्वारा विलायतमें भारतकी महिमा घर घर गायी जाती थी, रत्न-गर्भा स्वर्णभूमि आदि सुन्दर विशेषणोंसे भारतका नाम उच्चारण किया जाता था; किन्तु उस समय समुद्रयात्रा बड़ी भयानक और विपज्जनक थी, धन प्राण नष्ट होना एक साधारण बात थी। इससे लोग ऐसे कामोंमें सहसा धन नहीं लगाते थे और जो रुपये देते थे वे भी उन्हें जलमें फेंकनेके समान समझते थे। और इसीसे ऐसी यात्राको लोग 'एडवेंचर' अर्थात् 'दुस्साहस' कहते थे।

२२ सितम्बरकी सभाके दो दिन बाद एक और सभा हुई। उसमें ५७ जन उपस्थित हुए। सभामें स्वदेशकी मानरक्षा और इङ्गलैण्ड राज्यके व्यवसाय वाणिज्यकी उन्नतिके लिये भारतादि प्राच्य देशोंमें जाकर व्यापार करना निश्चित हुआ। और यह भी निश्चित हुआ कि रुपया देनेवाले सभी पुरुष इस व्यापारिक समूह वा "ईष्ट इण्डिया कम्पनीके" हिस्सेदार समझे जायंगे। उसी अधिवेशनमें राजाज्ञा प्राप्त करने, जहाज खरीदने और यात्रा सम्बन्धी प्रबन्ध करनेके लिये कुछ लोगोंकी कमेटियां नियतकी गयीं। कमेटीके मेम्बर डाइरेक्टर कहे जाते थे। इन कमेटियोंने अपना अपना काम आरम्भ किया। इनकी बैठकें बराबर होती रहीं। पर उस समय विलायतमें जहाजोंकी बड़ी कमी रहनेके कारण अच्छे जहाज नहीं मिल सके; इसके सिवाय रानी एलिजाबेथसे आज्ञा मिलनेमें भी बड़ा विलम्ब हुआ। रानी एलिजाबेथने तो एक बार बहुत शीघ्र अर्थात् १६ अक्टूबरको आज्ञा दे दी थी किन्तु उसी समय प्रिवी

कौन्सिलकी एक बैठक होकर पूर्व्व राजाज्ञा दूसरे पडोसी राजाओंसे की हुई सन्धिमें कुछ बाधा पहुंचनेवाली समझी जाकर रद्द कर दी गयी। पुन कम्पनीके वहुत लिखा पढी करनेपर सन् १६०० ई० के ,२३ सितम्बरको, पहली सभासे ठीक एक वर्ष बाद, राजाज्ञाका स्वीकृति सूचक पत्र मिला। उसे पाते ही डाइरेक्टर लोग उछलने कूदने लगे और उसी दिन सब हिस्सेदारोंकी एक सभा की गयी और उसमें एक नयी कमेटी १७ डाइरेक्टरोंकी बनायी गयी। डाइरेक्टरोंने बडी शीघ्रतासे जैसे मिले वैसेही तीन जहाज तीन चार दिनमें खरीद डाले। किन्तु वह सभी छोटे छोटे जहाज थे। उनमें ढाई तीन सौ टनसे * अधिक माल,ले जानेवाला एक भी जहाज न था। इसलिये दो सप्ताहके बाद एक बड़ा जहाज ६०० टन माल लेने वाला बहुत मोल भाव करके ३७०० पोण्डमें खरीदा गया।

अब इस काममें कुछ प्राण आया समझकर दूसरे लोगोंका ध्यान भी इसपर पडा और १०० हिस्सेदारोंकी संख्या २१८ तक पहुंच गयी।

कम्पनीकी मीटिङ्गोंमें जो धाधल मचती थी वह भी सुनने लायक है। कम्पनीके मेम्बर भाई कहे जाते थे। सभी भाई अपनी अपनी हाकते थे, कोई किसीकी सुनता नहीं था। इससे तङ्ग होकर कम्पनीको नियम बनाना पडा था कि सभामें एक विषयपर तीन बारसे अधिक यदि कोई भाई बोलेगा तो उसके

* एक टन २७ मन १२ सेरका होता है और जाहजमें ४० घन फूट (Cubic feet) एक टन समझा जाता है।

३ शिलिङ्ग ४ पेनी प्रत्येक वार बोलनेके लिये जन्त किये जायगे। इसके सिवाय हल्ला मचाकर या दूसरोंसे बातें करके सभामें बाधा पहुचानेसे २ शिलिङ्ग ६ पेनी जन्त। असभ्यता या फूहडपन दिखलानेसे या वैसे भावसे व्याख्यान देनेसे १० शिलिङ्ग जुरमाना। गवर्नर (सभापति या प्रधान) के सबको चुप होनेके लिये कहनेपर भी जो चुप न होगा उसकी ६ पेनी जन्त की जायगी। सभामें न आनेसे १ शिलिङ्ग, देरसे आनेसे ६ पेनी, बीचमें उठ जानेके लिये १ शिलिङ्ग जुरमाना नियत किया गया था, लगातार कई बार सभामें उपस्थित न होने से प्रिवी कौन्सिलके वारण्ट द्वारा पकड मगवाकर कारण पूछा जाता था।*

कम्पनी जिस कमजोरी और बाधा विपत्तिमें पैदा हुई थी वह कम्पनीके भाग्य या इतिहासमें बराबर बनी रही। पहले दिन जो रुपये लिखे गये थे वह तो एक यात्राके लिये भी यथेष्ट न थे। पर वह भी अदा करनेमें बेचारे डाइरेक्टरोंको जो कष्ट हुआ था वह कम्पनीके इतिहासमें पद पदपर प्रगट होता है। रुपये अदा करनेकी दौड धूप करते और राजकर्मचारियोंके पीछे फिरते फिरते कम्पनीका बेचारा डिप्टी गवर्नर बीमार पड गया। † जब कुछ लोगोंने किसी तरह रुपये नहीं दिये तब उनको प्रिवी कौन्सिलके वारण्टसे गिरफ्तार कराना पडा। ‡

---

* Hunter Vol I p 264

† उसी समय एक विद्रोहको साजिशके सन्देहपर कम्पनीका गवनर (प्रधान) जेलमें पडा था।

‡ Hunter Vol I. p 277

। अपने हाथसे लिखकर देना, स्वीकार कर रुपये न देना और काम करनेवालोंको कष्ट देना, ऐसी घटनाएं सब देशोंमें ही प्रायः देखने सुननेमें आया करती हैं किन्तु ऐसी बाधा विपत्तियां आ पड़नेपर जो लोग दूसरोंके सिर दोष मढ़, जातीय कामोंको छोड़कर अलग हट जाते हैं उन्हें इस दृष्टान्तको जरा आंखें खोलकर देखना चाहिये। और देखना चाहिये कि कर्म्मवीरोंको समस्त संसारमें ही ऐसे कष्ट हुआ करते हैं। हो भी क्यों नहीं? निकम्मे, दुर्बलप्रकृति लोगोंका ही सभी जगह बाहुल्य पाया जाता है और उनके द्वारा ऐसे कामोंमें बाधा विघ्न पहुंचना स्वाभाविक है। किन्तु सच्चे कर्म्मवीर 'एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति'के न्यायसे अकेलेही सब बाधा विपत्तियोंको हटानेमें समर्थ होते हैं। अपने कर्तव्यकर्म्मको सुसंपन्न करनेकी प्रबल आकाङ्क्षावश वे बाधा विपत्तियोंमें और भी दृढ़ हुआ करते हैं। ऐसेही लोग इतिहासमें अमर कीर्त्तिके अधिकारी होते हैं। नवप्रतिष्ठित "ईष्ट इण्डिया कम्पनीके" परिचालकोंने जिस असाधारण अध्यवसायका परिचय दिया था उसीका यह फल है कि आज इङ्गलैण्डने भारत जैसे विशाल देशका एकाधिपत्य लाभ करके भूमण्डलपर श्रेष्ठ स्थान अधिकार किया है!

ऊपर कही बाधा विपत्तियोंके सिवाय जहाजी कर्म्मचारी और अध्यक्षोंकी तलाशमें भी बड़ी तकलीफ हुई। प्राणभयसे कोई कम्पनीकी नौकरी स्वीकार नहीं करता था। सो जिन्होंने प्राणको हथेलीपर धरकर जाना स्वीकार किया उन्हें अधिक

वेतन देना पड़ा। वेतनके सिवाय पेशगी अलग देनी पड़ी। जिसका वेतन १०० पौण्ड हुआ उसे २०० पौण्ड पेशगी और जिसका ५० पौण्ड हुआ उसे १०० पौण्ड पेशगी। इसी प्रकार सभीको वेतनसे दूनी पेशगी दी गयी। इसके सिवाय जहाजी बेड़ेके प्रधान अध्यक्षकी कमीशन अलग नियत की गयी जिसमें वह निज स्वार्थके लिये कार्य्यमें सफलताकी पूरी चेष्टा करे।

कमीशनका ब्यौरा—यात्राके पश्चात् खर्च वर्च काटकर यदि मूलका दुगुना हो जाय तो कमीशन ५०० पौण्ड। यदि तिगुना हो तो १००० पौण्ड। चौगुना हो तो १५०० और पंचगुना हो तो २००० पौण्ड मिलेंगे।

इस प्रकार सब तय होनेपर यात्री वणिक् बेड़ेकी जो तैयारी हुई वह यों थी :—४ जहाज कुल १४०० टन माल लेने वाले। ४८० मनुष्य। सामानमें—लोहा (गढ़ा और बेगढ़ा) टीन, जस्ता, कांच, ८० थान रंगीन बनात, ८० थान करसी (एक तरहका ऊनी कपड़ा), १०० थान कपड़ा (नारव्हीच, शहरका बना हुआ) और विदेशी राजाओंको भेंट देनेकी चीजें सब ६,८६० पौण्डकी। बीस महीनेके खान पानकी कुल चीजें ६६०० पौण्डकी और २८,७४२ पौण्डकी चांदी सिक्के आदि।* बेड़ेके प्रधान अध्यक्ष जैम्स लैङ्कष्टर नामक एक व्यक्ति बनाये गये; आप इस कम्पनीके साथ इससे पहले एक बार भारत यात्रा कर चुके थे।

* Hunter, Vol. 1. p. 278 Beveridge. Vol 1, p, 230,

रानी एलिज़ाबेथसे कुछ विदेशी राजाओंके नाम सिफारशी पत्र लिखाकर अध्यक्षके हाथ सौंपे गये और ता० १३ फरवरी १६०१ ईसवीको जहाज छोड़े गये, किन्तु वायुकी प्रतिकूलतासे सवा दो महीने तक जहाज इङ्गलैण्डके किनारे ही टकराते रहे, अन्तमें २२ अप्रैलसे आगे बढ़ने लगे और १३ महीनोंमें (५ जून १६०२ को) सुमात्रा द्वीपके आचीन (Acheen) बन्दर पहुंचे। रास्तेमें स्वाभाविक विघ्न बाधाओंके सिवाय आबहवा और यात्राके कष्टसे इनके ४८० आदमियोंमें १०५ सुरधाम पधारे।

आचीन पहुंचकर बन्दरपर बंगाल, गुजरात, दाक्षिणात्य आदि प्रदेशोंके १८ जहाज लगे हुए देखे। वहीं दो डच वणिकोंसे उक्त देश विषयक कुछ बातें जानकर जहाजोंके लंगर डाले। बाद जहाजोंसे उतरकर राज-दरबारमें गये तथा रानी एलिजाबेथका पत्र और कुछ भेटकी वस्तुएं राजाके अर्पण की। राजाने प्रसन्न होकर अपने राज्यमें और जातियों की तरह इन्हें भी व्यापार करनेकी स्वतन्त्रता दी। यह लोग खुशी खुशी वहांसे लौटे। पर इनकी खुशी बहुत थोड़ी ही देर स्थायी रह सकी। कारण इनके यहां आनेका प्रयोजन विशेषतः मिर्च खरीदना था ; पर पिछले साल यहां मिर्चकी फसल बिगड़ जानेके कारण इनका आना निष्फल हुआ।

उधर आचीनस्थित पुर्तगीज दूतको इनके यहां आने और राज दरबारसे व्यापारकी स्वतन्त्रता पानेकी बात जानकर बड़ी डाह हुई ; उसने इसकी सूचनाका पत्र अपनी मलाकाकी कोठीमें भेजकर सलाह दी कि इनके जहाज पकड़ कर लूट

लिये जायं। किन्तु इसकी खबर अगरेजो वेडेके प्रधानको पहले ही मिल गयी और उसने पत्रवाहकको कब्जेमें कर लिया।

आचीनमें आना निष्फल होनेके कारण इनके प्रधानको बड़ी चिन्ता उपस्थित हुई। उसने मिर्चकी तलाशमें अपना एक जहाज सुमात्राके दक्षिणस्थित प्रियमान (Priaman) बन्दरको भेजा और बाकी तीनों जहाजोंको लेकर एक डच जहाजके साथ खुद, जावा (यवद्वीप) में मिर्च मिलनेकी सम्भावनासे, जावाकी ओर चला। रास्ते में एक पुर्तगीज जहाज अकेला आता मिल गया उसे देख यह सबके सब उसपर टूट पडे और उसका माल असबाव लूट अपने एक जहाजमें भर लिया और उस खाली पुर्तगीज जहाजको समुद्रमें बहा दिया। लूटे हुए मालसे अपना एक जहाज भरकर उसे सीधा इङ्गलैण्ड लौट जानेका आदेश दे प्रधान साहब दो जहाजोंको ले आगे बढ़े। *

यहा कुछ शका उपस्थित होती है। अङ्गरेज इतिहासकारोंने लूटे हुए पुर्तगीज जहाजमें ६०० टन माल और ६०० आदमियोंका होना बताया है और उसे बहुत सहजही में लूट लेना भी बताया है। किन्तु यह नहीं बताया कि इनके पास उनसे कम आदमी होनेपर भी उनके ६०० ने आत्मरक्षाकी कुछ चेष्टाकी या नहीं और अन्तमें उन ६०० आदमियोंका क्या हुआ? वे मरे या जीते रहे। और उसके सब मालसे इनके

* Beveridge's Comprehensive History of India Vol 1 p, 239

एक ही जहाजके भरे जानेकी बात पायी जाती है। किन्तु उसमें ६०० टन माल बताया है और इनके जिस जहाजमें माल भरा गया वह ३०० टन लेनेवाला था। सो उसका ६०० टन माल ३०० टनवाले जहाजमें किस तरह भरा गया? इसके सिवाय डच जहाजने लूटमें इनको मदद तो की पर उसके लूटका हिस्सा लेनेका कुछ भी उल्लेख नहीं मिलता है। समझ में नहीं आता कि डच जहाजने इनके साथ इतनी नेकी कैसे की! जिन डचोंकी इनकी कम्पनीसे पुर्तगीजोंसे भी अधिक हानि थी, उन्होंने इन्हें आचीन सम्बन्धी हाल बताने और जावा तक इनके साथ जानेकी कृपा क्यों की? अस्तु इस लूट डकैतीको अंगरेज इतिहासकारोंमें किसीने अनुचित, किसीने व्यापारी सिद्धान्तके विरुद्ध, किसीने सीधे रास्ते यात्रा निष्फल होते देख इस अनुचित कार्य्य द्वारा यात्रा सफल करना कहा है!

प्रधान साहब दो जहाजोंको ले आगे चले और जावा टापूके बनताम बन्दर पहुंचे। यहाँ भी राजकीय भेट पत्रादि देकर व्यापारकी स्वतन्त्रता प्राप्त की। यहां वे अपनी प्रयोजनीय मिर्च यथेष्ट पा सके और जहाज भर भरके खरीदी। और भी कुछ दूसरे मसाले खरीद किये और यहां अपनी एक कोठी स्थापित कर उसमें कुछ लोगोंको छोड दिया जिसमें पीछे भी खरीद फरोख्त होती रहे। एक बड़ी नौकासे कुछ लोगोंको मलक्कस द्वीप भेजा कि वे वहांके राजासे व्यापारकी स्वतन्त्रता प्राप्त कर रख जिसमें दूसरी यात्राके समय अधिक विलम्ब

न हो। इधरका इस प्रकार प्रवन्ध कर प्रधान साहब घरको ओर चले और ११, सितम्बर १६०३ को इङ्गलैण्ड पहुंचे। पर रास्तेमें जहाजकी पतवार टूट जानेके कारण उनके घर पहुंचनेकी सम्भावना नहीं थी, सो उन्होंने एक दूसरे जहाजके अध्यक्षके नाम चिर विदाईका पत्र भी लिख दिया था, जहाज तूफानमें भी पड़ गया था पर सौभाग्यवश वे सकुशल घर पहुंच गये। उनके बिछड़े हुए जहाज भी पहुंच गये। जावामें इन्हें १ शिलिङ्ग सेरके भाव मिर्च मिली जो इङ्गलैण्डमें पहले ६ शिलिङ्ग और अनन्तर १२ से १६ शिलिङ्ग सेरके भाव बेची जाती थी।

इस प्रकार इनकी पहली यात्रा पूर्ण हुई पर यात्राका फल भोग न कर सके। लण्डनमें इस समय महामारी (प्लेग)-का भयङ्कर प्रकोप था। मृत्युसंख्या इतनी भयानक थी कि ७ दिसम्बर १६०२ से १ दिसम्बर १६०३ तक प्रायः एक वर्षमें ३८,१३८ आदमी केवल लण्डनमें महामारीके ग्रास बने थे। लोग जहां तहां प्राण भयसे मारे मारे फिरते थे, कारवार तमाम वन्द था। इसलिये कंपनीका लाया हुआ माल भी जहांका तहां सड़ने लगा। सिर मुड़ाते ही ओले गिरे!

कम्पनीके जहाज पूरे अढ़ाई वर्षके वाद लौटे थे। इस अढ़ाई वर्षके समयमें इङ्गलैण्डस्थित कम्पनीके मेम्बरोंको भी कुछ कम परेशान नहीं होना पड़ा था। राजानुमतिसूचक पत्र (charter) या राजकीय सनदमें प्रति वर्ष ६ जहाज प्राच्य देशमें भेजनेका विधान था किन्तु कम्पनी केवल एकवार ही

चार जहाज भेज सकी थी ; पश्चात् और जहाज भेजनेमें समर्थ न हुई।

कम्पनीके डाइरेक्टरोंने दूसरी बार जहाज भेजनेकी बहुत चेष्टा की। पहले जहाज दक्षिण मार्गसे गुडहोप नामक अन्तरीपके रास्ते भेजे गये थे। दूसरी बार उत्तर-पश्चिम अमेरिका होकर नये रास्ते भेजनेका विचार किया गया। कम्पनीके गवर्नरको कहा गया कि, राजकीय सनदके कागजपत्रोंको देखकर उपाय सोचें कि दूसरी बार रुपये देनेके लिये मेम्बरों को बाध्य किया जा सकता है वा नहीं ? देख सुनकर मेम्बरों के पास चन्देकी पुस्तक भेजी गयी पर केवल ११ हजार पौण्ड चन्दा लिखा गया, जो एक यात्राका खर्च देखते हुए कुछ भी न था*।

रानी एलिजबेथको आशा थी कि, कम्पनी प्रति वर्ष जहाज भेजेगी और उसके द्वारा राजकरकी भी कुछ वृद्धि होगी, किन्तु जब उस आशाकी पूर्त्ति होती दिखलायी नहीं दी तब उसने नाराज होकर कम्पनीके नाम पत्र लिखा कि कम्पनीकी सुस्तीको मैं बहुत नापसन्द करती हूं ; कम्पनीको डच लोगोंके उत्साह और कार्य्यकुशलतापर ध्यान देना चाहिये। †

रानीका उक्त पत्र ५ नवम्बर १६०१ को कम्पनीकी जनरल मीटिङ्गमें पढ़ा गया। पर कम्पनीके कामसे लोगोंको विरक्ति उत्पन्न हो गयी थी। मेम्बरोंने मीटिङ्गमें उपस्थित

* Court Minutes of 7th August & 13th October 1601.

† Hunter Vol I. P. 280.

होना छोड़ दिया था। इस मीटिङ्गमें केवल ६ मेम्बर उपस्थित थे। इतनी कम उपस्थितिके कारण यह विचार दूसरी मीटिङ्गपर रखा गया और स्थिर किया गया कि दूसरी मीटिङ्गके सूचना पत्र पर लिखा जाय कि 'जो उपस्थित न होगा उसे २० शिलिङ्ग जुरमाना देना पड़ेगा।' किन्तु इन सब काररवाइयोंका कुछ भी फल नहीं हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि, तीन सौ वर्ष पहले इङ्गलैण्डके लोग भी सभा समितियोंमें यथासमय उपस्थित होना और अपना स्वीकृत चन्दा देना और नये कामोंमें मन लगाना आदि विषयोंमें वैसे ही उदासीन थे जैसे आज हमारे हिन्दुस्थानी भाई! अस्तु। जब तक कंपनीके जहाज वापिस नहीं लौटे तब तक डाइरेक्टरोंके किये कुछ भी न हो सका। कंपनीके जहाज लौटनेसे पहले उसी साल (२३ मार्च सन १६०३ ई०) रानी एलिजबेथ इस संसारसे चल बसी।

* कंपनीके कामसे लोगोंकी अरुचिका एक और भी कारण था। उस समय इङ्गलैण्ड देशके अर्थशास्त्र-विशारदोंके मतसे देशका निज चांदी सोना देकर विदेशोंसे खान पानकी चीजें लाना देशका धन नाश करना समझा जाता था! इसकी पुष्टिमें जेरर्ड (Gerard de Malynes) नामक एक नीतिज्ञने बालकोचित युक्ति द्वारा दिखलाया था कि, हमारा यह काम ठीक वेष्ट इण्डियन लोगोंकासा है जो अपने देशका सच्चा धन, चांदी सोना जवाहिरात आदि देकर विदेशी खिलौने, गोली,

* Hunter Vol. I P. 282

गेंद, घंटी, छुरी, आइने आदि लेते हैं ; * किन्तु जेरर्ड साहबकी वह युक्ति आज केवल हास्यजनक समझी जाती है। वर्त्तमान अर्थशास्त्रविद् मनीषियोंका मत है कि, परदेशकी चीजें यदि परदेशी ही हमारे देशमें लाकर बेचें तो उससे देशकी आर्थिक हानि होती है, कारण उस अवस्थामें उक्त वस्तुके व्यवसायसे होनेवाला लाभ परदेशियोंको मिलता है ; अतः वह हमारे देशसे सदाके लिये निकल जाता है। हम लोग जो दाम देते हैं उसके बदले परदेशी खाद्यद्रव्य पाते हैं ; सुतरा उससे कमी देशका अर्थनाश नहीं हो सकता। पर उक्त वस्तुके असली मूल्यपर परदेशी व्यवसायी जो लाभ लेते हैं वही हमारी हानि है ; कारण उसके बदले हम कुछ भी नहीं पाते। सो यदि अपने देशके व्यवसायी ही स्वयं परदेश जाकर जीवनके लिये आवश्यक माल ले आवें तो उससे देशकी हानि कभी नहीं हो सकती, वरन् श्रीवृद्धि ही होती है।

डच लोग इङ्गलैण्डके अर्थशास्त्र-विशारदोंकी नीतिका हलकापन अच्छी तरह समझे हुए थे। इसीसे वे बड़े उत्साहसे इस काममें लगे हुए थे। इङ्गलैण्डने जहां दो यात्राओंमें ४० हजार पौण्डके करीबका माल चांदी सोना आदि विदेश भेजा गया था, वहां उस समयकी डचोंकी कंपनी ५ लाख ४० हजार पौण्डकी पूंजीसे काम कर रही थी।

रानी एलिजबेथके मरनेपर स्काटलैण्डके राजा जेम्स इङ्गलैण्डकी गद्दीपर बैठे। रानी एलिजबेथकी अपने शासनकालमें स्थापित कंपनीके साथ कुछ सहानुभूति थी, किन्तु

प्रिवी कौन्सिलके मेम्बर और राजकर्मचारी उससे सदा ही नाराज रहते थे। नये महाराज उन्हींके हाथकी पुतली हुए। अब तो प्रिवी कौन्सिलने कंपनीकी सहांनुभूतिसे हाथ खैंच लिया और कड़ा तगादा किया कि राजकरके रुपये अदाकर शीघ्र दूसरी यात्राका प्रबन्ध करो, नहीं तो राजकीय सनद रद्द की जायगी।

कंपनीके जहाज लौटे उस समय राजकर और जहाजी कर्म्मचारियोंके वेतनके ३५ हजार पौण्ड कम्पनीके मत्थे चढ़ गये थे। शहरमें प्लेग भयङ्कर फैला हुआ था। लाया हुआ माल बिकता नहीं; रुपये आवें तो कहांसे? विपद भी जब आती है तो चारों ओरसे एक साथ ही टूट पड़ती है। राज-कोप, दैवकोप और दारिद्र्य कोपने एक साथ ही चढ़ाई की। दैवकोपकी महामारी जब तक नहीं मिटी तबतक तो कम्पनी कुछ भी करनेमें समर्थ नहीं हुई। महामारीके शान्त होनेपर भी कंपनीके मालका नगद खरीदार कोई न मिला। लाचार मेम्बरोंको ही और रुपये निकालने पड़े। व्यवस्था की गयी कि, पहली और दूसरी यात्राका हिसाब शामिल किया जाय और पहली बार एक हिस्सेके २५० पौण्ड देनेवाला इस बार २०० पौण्ड और दे और बदलेमें एक नियत संख्यक ५०० पौण्डकी मिर्च ले ले, और पीछे अपने सुविधानुसार बेचता रहे। ऐसे अनेक कारणोंसे दूसरी यात्रा बहुत फीकी रही। दूसरी यात्राके लिये कुल ६०,४५० पौण्ड एकत्र हुए। इनमें भी ४८,१५० पौण्ड केवल जहाजोंकी मरम्मत और तैयारी आदि ऊपरी कामोंमें ही लग गये। बाकीके

केवल १,१४२ पौंडका माल और ११,१६० पौण्डकी मुद्रा चांदी आदि धन वणिक वेडेके साथ रहा। पहली बार ६,८६० पौण्डका माल और २८,७४२ पौण्ड नकद था। पहली यात्रासे लौटे हुए चारो जहाज दूसरी यात्राके लिये तैयार किये गये और बेडेके प्रधान अध्यक्ष कप्तान हेनरी मिडलटन नामक साहब बनाये गये। २५ मार्च १६०४ ई०को इन जहाजोंने यात्रा की। बेडा प्रथम बारके रास्ते दक्षिण मार्गसे ही चला और उसी साल २० दिसम्बरको सीधा जावा टापूके उसी बनताम (Bantam) बन्दरमें पहुँचा जहा पहली यात्राके समय एक कोठी स्थापित कर अपने कुछ लोगोंको छोड गया था। बन्दरपर ६ डच जहाज लगे हुए थे। उनके अड मिरलसे प्रेमसंभाषण और एक साथ प्रीतिभोजन हुआ। अपने लोगोंसे मिले। और फरवरी (१६०५) तक वहासे दो जहाजोंमें माल भरकर इङ्गलैण्डको रवाना किये। और बाकी दो जहाज मलकस* (Moluccas) द्वीपपुञ्जको चले। पहली यात्राके समय वहा भी एक नौका द्वारा कुछ लोगोंको राजाज्ञा प्राप्त कर रहनेके लिये भेजा था। वहा पहुंचकर अपने लोगोंको वापिस लिया। पर वहां काम करनेमें सफलता न हुई। कारण डच लोग वहांसे पुर्तगीजोंको निकालकर वहाका सब व्यापार अपने हाथमें किया चाहते थे। सुतरां वह लोग अङ्गरेजोंका भी वहा आना देखकर नाराज हुए और उन्हें अलग ही रहनेको कहा। यद्यपि अङ्गरेजोंको यह बात बहुत खटकी किन्तु राजकीय सनदमें किसी क्रिस्तान शक्तिको

नाराज कर किसी स्थानपर वाणिज्य करनेका पूरा निषेध था; इस लिये यह लोग चुपचाप वहांसे सरक गये। पासके दूसरे टापुओंमें काम करनेकी चेष्टा की किन्तु विशेष सफलता नहीं हुई; कारण डचोंने इस ओरके समस्त वाणिज्यको ही प्रायः हथिया लिया था। यह लोग कुछ ले देकर वहांसे लौटे और फिर बनताम होते हुए घरकी ओर चले। बनताम बन्दरसे जिन दो जहाजोंको सीधे इङ्गलैण्ड भेजा था, उनमेंसे एक अबतक रास्तेमें ही था और इन्हें मिला। दूसरा 'सुसान' नामक जहाज रास्तेमें गायब हो गया और उसका कुछ भी पता न लगा। अवशिष्ट तीनो जहाज एक साथ ६ मार्च १६०६ को इङ्गलैण्ड पहुंचे।*

एक जहाजके मारे जानेपर भी लायी हुई चीजोंको बेचने पर लाभ अच्छा हुआ। सब चीजें बेचकर हिसाब जोड़नेपर पूंजीके रुपयोंपर फी सैकड़ा ९५ बचत हुई। किन्तु उक्त हिसाब तैयार होनेमें कई वर्ष लग गये। सो सन १६०९ से पहले फलाफल प्रकट करनेमें कंपनी समर्थ नहीं हुई। इस लिये इतना अच्छा लाभ होनेपर भी हिस्सेदार लोग सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने दिखलाया कि पूंजीके रुपयोंपर गत दस वर्षका व्याज जोड़नेसे यह मुनाफा फी सैकड़े केवल ९॥ होता है। इङ्गलैण्डमें उस समय व्याजका भाव साधारणतः वार्षिक ८ सैकड़ेका था। इस लिये इतनी झोंकी उठाकर

* Beveridge Vol 1 pp 242 & 243

मामूली फायदा उन्हें पसन्द न आया और कंपनीको उठा देनेकी चेष्टा की जाने लगी। *

प्रिवी कौंसिलकी नाराजीका जिक्र पहले आ चुका है। कंपनीके जहाजोंके दूसरी यात्राके लिये रवाना होनेपर सन १६०४के जून मासमें मिचलवरन नामक एक फौजी अफसरको प्राच्य देशोंमें वाणिज्य करनेकी नयी राजकीय आज्ञा मिली। कंपनीको मिली हुई पूर्व्व सनदमें १५ वर्षके लिये केवल कंपनीको ही प्राच्य देशोंमें वाणिज्य करनेका अधिकार दिया गया था। उस अवधिके भीतर मिचलवरनको नयी आज्ञा देना, पहली सनदके बिलकुल विरुद्ध था। किन्तु राजकर्म्मचारियोंने कानूनी दाव पेच निकाले कि, पहली सनदमें कपनीके मेम्बरोंको व्यापार करनेका अधिकार दिया गया था और मिचलवरन भी उस समय कंपनीके एक मेम्बर थे!

मिचलवरन इङ्गलैण्डके प्रधान खज़ानची साहबके कोई मित्र वा रिश्तेदार थे। कंपनीको जब राजाज्ञाकी स्वीकृति मिल गयी थी तब खज़ानची साहबने मिचलवरनको कंपनीके बेड़ेका प्रधान बनानेके लिये बहुत अनुरोध किया था। कंपनीके मेम्बर इस अनुरोधसे बड़ी दुविधामें पड़े थे। राजवर्गीय व्यक्ति अध्यक्ष बनानेसे सबको उससे डरना होगा तथा अपनी स्वतन्त्रता जाती रहेगी और न बनानेसे राजकर्मचारी नाराज होंगे और बहुतसी बाधा विपत्तियां पड़ी होंगी। बहुत दिनों तक कंपनीके मेम्बरगण इसी तरह छ पांच करते रहे, पर

* Hunter Vol I p 280

अन्तमें उन्होंने अपनी स्वतन्त्रताके अनुरोधसे एज़ानची साहब-की बातको साहसपूर्वक अस्वीकार किया। इसी झमेलेमें स्वीकृति मिलने पर भी कई मास तक राजकीय सनद अटकी रही थी। मिचलवरनने उस समय कपनीके मेम्बरोंमें अपना नाम लिखा लिया था ; इसीसे सनदमें उसका नाम पाया जाता है। पर नाम लिखानेके सिवाय उसने कपनीके काममें एक कौड़ी भी नहीं दी थी, सो पीछे मेम्बरोंकी सूचीसे उसका नाम हटा दिया गया था। पर सनदमें नाम लिखे रहनेके आधारपर ही राजकर्मचारियोंने नये राजासे उसे अनुमति दिलवा दी।

मिचलवरनका उद्देश्य विशेषतः लूट डकैतीके लिये ही यात्रा करनेका था। उसने अपनी यात्राके अठारह महीनोंमें जावा स्थित डचोंपर धावा किया, एक चीना जहाजको लूटा तथा और भी बहुतसी राहज़नीकी जिसके कारण प्राच्य देशोंमें अंगरेजोंका नाम भयानक डकैतोंमें गिना जाने लगा। यह सब काम कर सन १६०६में मिचलवरन इङ्गलैण्ड पहुंचा ; पर फिर दयालु भगवानने उसको दूसरी यात्रासे विरत ही रखा*।

जो हो, बाधा विपत्ति और कठिनाइयोंपर भी कम्पनीका काम जारी रखा गया और उसके द्वारा न केवल मेम्बरों वरन् सारी अङ्गरेज जातिको जो महान लाभ हुआ वह किसीसे छिपा नहीं है। उसका पूरा इतिहास लिखनेके लिये तो एक बड़े भारी पोथेकी ज़रूरत है। इस लेखका उद्देश्य तो कम्पनीकी रचना पर केवल एक दृष्टि डालना है।

* Hunter Vol I P, 284

वाणिज्यमें परिवर्तन ।*

-: वा :-

प्राचीन और नवीन वाणिज्यकी तुलना ।

संसार परिवर्तनशील है। सुतरा संसारके समस्त पदार्थोंमें सदैव कुछ न कुछ परिवर्तन होते रहना स्वाभाविक है। आज जो पदार्थ जिस अवस्थामें दिखायी देता है, कल उसमें जरूर कुछ न कुछ परिवर्तन होगा चाहे वह प्रत्यक्षमें हो वा परोक्षमें। इस प्रकार दिन दिन परिवर्तन होते होते, एक दिन उसके रूपमें इतना परिवर्तन हो जाता है कि पहली और पिछली शकल तक पहचानी नहीं जाती। कभी कभी तो यह परिवर्तन-शीलस्वभाव अपनी प्राकृतिक उद्दण्डता दिखाता हुआ भूकम्पादि के द्वारा इतना प्रवल प्रभाव दिखलाता है कि देखते देखते कुछ का कुछ हो जाता है।

नाना-भोग-सम्भारपूर्ण देदीप्यमान विशाल नगर अपने सुप्रसर-शोभन राजमार्ग और इन्द्रपुरी सदृश बडी बडी अट्टालिकाएं, नरनारी पशु पक्षियोंके कलरव सहित हठात् क्षण भरमें भूगर्भशायी हो चिरशांतिको प्राप्त हो जाते हैं। और उनके स्थान पर विशाल महोदधि उत्ताल तरङ्गमाला विस्तार पूर्वक

भैरव गर्जनसे जन समाजके चित्तमें भय उत्पादन करने लगता है। पक्षान्तरमें महोदधिकी तरङ्गमाला भेद कर पृथ्वी देवी सौम्य रूपसे मस्तक उत्तोलन करती है।'

परिवर्तन दो तरहसे होता है, एक शनैः शनैः, दूसरा हठात्। देखा जाता है कि नवीन वाष्पीय यन्त्र विद्याके अविष्कारसे कुछ दिन हुए वाणिज्यमें एक हठात् परिवर्तन हुआ है। वस्त्र और अन्न वाणिज्यका कैसा जोर शोर आज भारतके इस ओरसे उस छोर तक दिखायी देता है? केवल भारतही क्यों, समस्त भूमण्डल पर आज अन्न और वस्त्र वाणिज्यकी प्रधानता होती जाती है, यह उसी आकस्मिक परिवर्त्तनका फल जान पड़ता है।

नये नये आविष्कृत यन्त्रोंसे विविध प्रकारके वस्त्रोंका बनना, नित्य एक न एक नये रूपमें वस्त्रोंका अवतीर्ण होना उनपर तितुली गिरगिटकेसे रङ्ग चढ़ना, नित्य नयी पालिश, डिजाइन, काट छांट आदिसे उनका डौल डौल गढ़ना, सुन्दर सुन्दर मनलुभावन नम्बर, मार्का, चित्र विचित्र तसवीरें लगाकर उनका रूप-शृङ्गार बनाना, बढ़िया बढ़िया कागजकी पेटियोंमें उन्हें बड़ी हिफाजतसे सजाना और बड़े मजबूत बक्सोंमें उन्हें भर कस कर, एक स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुंचाना, बड़ी बड़ी रेल गाड़ियां और बड़े बड़े विशाल जहाजोंका उन्हें पृथिवीके एक भागसे दूसरे भागमें पहुंचानेके लिये प्रतिक्षण तैयार रहना, और एक तरफसे वस्त्र भर भरके लाना और दूसरी तरफसे देश-जात अन्न, कपास, कोयला, पटसन और अनगढ़ लोहा तांबा पीतल आदि भर भरके ले जाना आदि आज जिस वृहदा-

कारमें देख रहे हैं, वह आकार प्राचीन इतिहासके किसी भी पृष्ठपर अङ्कित नहीं हुआ है।

उदर भरनेके लिये अन्न, लज्जा शीतोष्ण निवारण करने के लिये वस्त्र सदासे ही नित्य व्यवहारके पदार्थ गिने जाते हैं नित्य नैमित्तिक पदार्थोंके लिये पहले जमानेमें कभी कोई जाति परमुखापेक्षी रहना नहीं चाहती थी। सभी अपने अपने ग्राम, नगर, वस्ती और अड़ोस पडोसमें नित्य व्यवहार्य वस्तुओंको उत्पन्न करते थे, और वहांके निवासी वही खा पीकर बड़े सुख से दिन व्यतीत करते थे। वङ्गालकी भूमि चावल उत्पन्न करती थी तो वङ्गाली लोग नित्य खाद्यके लिये दूसरे किसी अन्नकी आवश्यकता नहीं समझते थे। मरु प्रदेशमें बाजरा होता था तो हमारे मारवाडी भाई नित्य उसीका आदरके साथ सेवन करते थे। जहां गेहू चना होता था वहा वही खाया जाता था। पृथिवीके जिन भागोंमें अन्न फल मूलकी उपज बहुत कम होती थी वहांके निवासी मांसादिसे ही अपने पापी पेटको भरते थे। किन्तु नित्य खाद्यके लिये दूसरेका मुंह ताकना नहीं चाहते थे। आजकल यदि दूसरे लोग हमें अन्न और वस्त्र न ला दें तो हम भूखे नङ्गे ही रहें। ऐसी परतन्त्रता उस समयके लोगोंको स्वीकार नहीं थी।

सभी जगह अन्नके साथ साथ रूई और ऊन भी पैदा होता था। जहां जैसी रूई और ऊन पैदा होता था वहां वैसा ही वस्त्र भी तैयार होता था; वहांके लोग उसीसे आभूषित होना विशेष गौरवकर समझते थे। अधिकांश लोगोंकी जीविका और प्रधान

कर्म खेती था। खेतीसे पैदा हुए अन्नसे अपने खाने भरका रखकर बाकीसे अपनी दूसरी आवश्यकताएं पूरी करते थे। सभी जगह वहाकी दूसरी नित्य आवश्यकीय चीजें बनाने वाले कारीगर रहते थे या रखे जाते थे। जुलाहे, लुहार, बढई, कुम्हार धोबी, चमार आदिसे कोई ग्राम या कसबा तक खाली नहीं रहता था। कारीगर लोग अपने नित्य खाद्यके लिये किसानोंसे अन्न लेकर उनके आवश्यक औजार हरवे बना देते थे। अपने पडोसमें उपजी रूईसे चरखेपर सूत कातना हमारी गृहलक्ष्मिया उन दिनों मन बहलानेका एक उपाय समझती थीं। इस सूतसे पडोसी जुलाहे कपडा बुनकर अपनी मजदूरीके पैसे या अन्न ले लेतेथे। इसी प्रकार नित्य आवश्यकीय वस्तुए जहाकी तहा तैयार और खर्च होती थीं। न उनके लिये रेलकी आवश्यकता थी, न जहाजकी, और न रैली ब्रादर जैसे बडे वणिकमण्डलकी।

आजकल कागजी घोडोंकी कैसी दौड धूप है, नित्य करोडों मन कागज काट छाट भाजकर पुस्तक और समाचार पत्र रूपमें अवतीर्ण होता है। ससार भरके कला कौशल, ज्ञान, विज्ञान, नीति, धर्मको एकही पुस्तकमें कूटकूटकर भरनेकी चेष्टा की जा रही है। जर्मनी फ्रान्स इङ्गलैण्ड अमेरिकाके लोग उसी कागजी ज्ञानसे समस्त संसारके वाणिज्य और धनको हडपा चाहते हैं। समस्त ससारके लोगोंको उसी ज्ञानके बल अपनी मातहत प्रजा या गुलाम बनाना चाहते हैं। ऐसा घोर स्वार्थ और लुटेरापन उस जमानेमें नहीं था। सभी प्राप्त अवस्थामें ही सन्तुष्ट रहा करते थे।

हमारे कोई कोई भाई हसेंगे कि अज्ञान अन्धकारके समयको जिसमें रेल, तार, कलकारखाने अस्पताल सर्वाङ्गपूर्ण प्रदर्शनागार, विराट् विश्वविद्यालय आदि कुछ भी न थे, न तडाक फडाक संवाद अखबार और पुस्तकोंका समस्त भूमण्डलमें फैलानेका अवलम्ब ही था,—उस अन्धेरे जमानेको अच्छा और इस रोशनदार जमानेको डाकू लुटेरोंका कैसे कहा जाता है? इसका उत्तर विचार करनेसे स्वयं ही विदित हो जायगा। आज जिन व्यवसायोंने उन्नतिका उच्च सिंहासन प्राप्त कर रखा है, आगे उनकी आवश्यकता ही न थी। जब घरमें अन्न दूध घीकी कमी न थी, खानेपीनेको मन चाहा मिलता था, शरीरमें बल था, रोग व्याधि पास नहीं आती थी उस समय दवा अस्पतालकी आवश्यकता किसे थी?

जब ग्राम, वस्ती, घर, गौ, बैल, ऊंट, घोड़ोंसे ठसाठस भरे रहते थे, और तीव्र गामी घोड़े हाथियोंकी भी कमी न थी, जलाशय नदी नाले नौका जलतरी समूहोंसे परिपूर्ण रहते थे, अपने सभी काम अपने अधिकार और पहुंचके भीतर थे—क्षण क्षणमें बदलते नहीं थे—उस समय रेल तारकी विशेष क्या आवश्यकता थी? जब ग्राम ग्राममें, घर घरमें ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्रके लिये अपने अपने वर्णके उपयुक्त बनने बनानेको शिक्षाका विधान था ग्राम पाठशाला वा पिता पितामह और अडोसी पडोसीके पास ब्रह्मणका पुत्र पूजा पद्धति ज्योतिष आदि, क्षत्रीका निशाने और पटेवाज़ी वैश्यका व्यापार और उसके उपयुक्त सरल हिसाब और शूद्रका सेवा कर्म और

पशुपालन सीख लेता था, जब सच्चे आदर्श विद्यालय वा विश्वविद्यालय काशी मिथिलां नदिया आदि थे, जहां मनुष्य को सच्चा कार्य कुशल आत्मनिर्भर बननेको शिक्षा दी जाती थी, जिस शिक्षासे किसी समय कान्यकुब्ज पण्डिताई, राजपूत, महाराष्ट्र वीरता, शस्त्र चालन, और अग्रवाल जाति वाणिज्यके लिये सुप्रसिद्ध हो चुकी थी, जिस शिक्षासे यहांका सेवाधर्म्म वा कर्म्म भी कुछ कम विख्यात नहीं था—एक दिन नमक खाने पर प्राणतक देना यहींके निवासी जानते थे; उस समय केवल स्वार्थपालनके लिये बड़ी बड़ी नौकरियोंकी आवश्कता ही क्या थी? मालिकका अनिष्ट करना, उस समयके लोग जानते ही नहीं थे। उस समय मालिक और नौकरमें परस्पर भ्रातृभावका गाढ़ बन्धन पड़ जाता था। जिसके फलस्वरूप मालिकके लड़के वाले नौकरोंको चाचा, ताऊ, बाबा, आदि कहनेमें तनिक भी नहीं सकुचाते थे। जिस शिक्षाका प्रभाव इतनी उच्च श्रेणीतक पहुंचा हुआ था। उस समय आज जैसे केवल कागजी सनद बांटने वाले "विश्वविद्यालय" की वास्तवमें कुछभी आवश्यकता न थी।

सारांश, जब शिक्षा प्रधानतः अनुभव मूलक थी और संयमही उसका उद्देश्य था, उस समय आज जैसे विलासिता-पूर्ण और बहु-व्यय साध्य महाविद्यालयोंकी आवश्यकता ही क्या थी? जब तीर्थयात्रा ग्राम ग्राम, गली गली पैदल घूमने और सबसे मिलते जुलते हुए दुनियांकी देख-भाल तलाशके लिये सच्चे प्रदर्शनालयका काम देती थी, जब घूमते फिरते बड़ी राजधानियों में जन्तुशाला विचित्र यानवाहन नानाप्रकारके विलासोपकरण

देखने निहारनेका अवसर मिलता ही था, तब एक बड़े घरमें कुछ चीजोंको सजा रखनेकी विशेष क्या आवश्यकता थी?

अधिक क्या? जब घरमें सुख था अनन्त सुख था; अपनी अभिलाषा आवश्यकता वहीं पूरी हो सकती थी उस समय वृथा दौडधूप करने, घरसे निकलनेकी किसे सूझती थी? जिसके घरमें किसी बातकी कमी न थी या जिसके घरहीमें ब्रह्माण्डव्यापी आनन्द परिपूर्ण था, उसे दूसरेको सताना, लूटना अपने पराये दोनों के आनन्दमें विघ्न डालना, आनन्दको निरानन्दमें परिणत करना—क्या कभी अच्छा लग सकता था? नहीं! नहीं!! कदापि नहीं!!!

अभावकी पूर्त्ति हो सकती है। पर जब अभाव ही न हो तो पूर्त्ति हो किसकी? उस समय तो अभावकी कमीके ही प्रमाण पाये जाते हैं पर आज अभाव सीमासे भी बढ गया है। अभाव अधिक बढ़ जानेके कारण उसने सबको अधीर असन्तुष्ट और दुःखित कर दिया है। जो हो, इन सभी बातोंसे हमारी समाजके सब अङ्गोंमें परिवर्तनके निदर्शन सस्पष्ट दिखायी दे रहे हैं।

वाणिज्यमें वह परिवर्तन कहांतक हुआ है, उसे जाननेके लिये देशकी पूर्व्वावस्था को ध्यानमें लाना होगा। पूर्व्व समयके व्यापारके तरीके पण्यद्रव्योंके भाव, अन्नके भाव आदि जानना होगा। सबसे पहले अन्नका भाव जानना चाहिये, जिससे देश दशाका अनुभव होना सम्भव है। अङ्गरेज इतिहास-लेखकोंने तो उस समयके अन्नके भाव आदि लिखनेका बहुत कम कष्ट

उठाया है, और हमारे भाईयोंने तो उस समयका इतिहास लिखाही नहीं वा लिखा हो तो मिलता नहीं; इससे दोष दें तो किसे ? पर जो हो; इधर उधरकी ढूंढ़ तलाशसें जो कुछ टूटी-फूटी बातें पायी जाती हैं उन्हींसे देशदशाका दिग्दर्शन मात्र किया जाता है ।

पहले कहा जा चुका है कि, जिस प्रदेशमें जो अन्न उपजता था, वहांके निवासी वही खाकर उदर पोषण करते थे । उस समय प्रादेशिक अन्नका भाव अपने अपने प्रान्तमें 'सब धान बावन पंसेरीकी' तरह एकसा ही था । बावन पसेरीवाली कहावत पर भी ध्यान देनेसे यह उस समयकी सत्य घटना बतानेवाली जान पड़ती है । बावन पसेरीके ६॥ मन होते हैं । किसी स्थानपर एक रुपयेमें ६॥ मन सब तरहका धान (अन्न) बिकने लगा होगा, उसीसे यह कहावत चली जान पड़ती है । किन्तु इसे केवल किम्वदन्ती कहकर उड़ा देना चाहें तो भी जो लिखित प्रमाण पाये जाते हैं वे भी इसी तरहके भावका बहुत समर्थन करते हैं ।

आईने अकबरीमें बहुतसी वस्तुओंके भाव पाये जाते हैं । उसमें अन्नके सब मौसिमोंके औसत भावोंकी एक सूची पायी जाती है । सूचीमें १२ दामके मनभर गेहूं लिखे हैं जो हिसाब करनेसे रुपयमें साढ़े तीन मन अन्दाज होते हैं । मूंग और जौ रुपयेमें ५ मन, मटर करीब पौनेसात मन, और घी सोलह सेर का है । आईने अकबरी सन् १५८४ ई० में लिखी गयी थी, यह उसी समयके भाव हैं ।

बङ्गालमें नवाब शाइस्ता खांके समय सन् १६८० से ८६ ईसवी तक रुपयेमें ८ मन चावल विकते थे, यह सभी इतिहासप्रेमी जानते हैं। शाइस्ता खांके पश्चात् सरफराज खांके शासन काल (सन् १७३० ई०) में भी रुपयेमें वही आठ मन चावल विकनेके प्रमाण पाये जाते हैं। * एक प्रमाण अङ्गरेजोंके हाथका लिखा पाया गया है। विलसन साहबके एकत्र किये बङ्गाल सम्बन्धी कागज पत्रोंमें एक जगह लिखा है—सन् १७१० ई०में कलकत्ता, बम्बई, मदरास आदि प्रान्तोंमें चावलकी बड़ी टूट पड़ गयी थी। ऐसे कठिन समयमें ईस्ट इण्डिया कम्पनीने कलकत्तेमें गरीबोंके रक्षार्थ रुपयेके मनभर महीन चावल और दस मन मोटे चावल बेचना आरम्भ किया था। †

इस सम्बन्धमें यहां एक हालमें प्रकाशित लेखका उल्लेख करनेकी इच्छा होती है। 'ऐतिहासिक चित्र' नामक बङ्गाल मासिक पत्रके चौथे वर्षमें ईसवी सन् १७८०की दुर्गा पूजाके खर्चका परचा प्रकाशित हुआ है। पूजा वर्द्धमान जिलेमें हुई थी। पूजामें १७मन महीन चावल ६।)८० में खरीदे गये थे। जो रुपयेके तीन मनके अन्दाज होते हैं। प्रकाशकने परचेके साथ अपने कानों सुनी एक मजेदार घटनाका उल्लेख किया है। लिखा है, एक बूढ़े तांतीके मुखसे सुना था कि उसके दादाने एक कृषकको उसीके खेतकी रुईसे आठ कपड़े बनाकर दिये। मजूरी एक रुपया हुई। कृषकने अपने धानके ढेरसे रुपयेका

* Staurts History of Bengal
† Early Annals of the English in Bengal by C. R. Wilson Vol. I. p. 334.

साठी धान तातीके लिये अलग कर दिया। ताती (जुलाहा) और उसका पुत्र दोनों उसे ढोकर घर लाना प्रारम्भ किया। कृपकके घरसे तातीका घर केवल आध मीलकी दूरी पर था। ढोते ढोते दिन भर बीत गया पर धान न निपटा! यह देख वृद्ध ताती झु झलाकर कृपकसे कहने लगा कि, "तुमने मेरे धानमें और धान मिला दिया है, बड़े अन्यायकी बात है!" तातीके इन भोले भाले वाक्योंपर हसी आती है। किन्तु साथ ही देशकी वर्त्तमान अन्नाभावकी दशापर रुलाई भी आती है। उस समय मुफ्तके अन्नको ढो लानेका कष्ट भी बरदास्त नहीं था। किन्तु आज "अन्न, हा अन्न!" करते हुए करोड़ों प्राणी प्राण विसर्जन करते हैं। हिसाब लगानेसे ऊपर वाली घटना, सौ सवासौ वर्षसे अधिकको नहीं ठहरेगी। उस समयके लोगोंने अन्न कष्ट कैसा होता है, इसका अनुभव स्वप्नमें भी किया था या नहीं, सन्देह है।

हमारा राजपूताना देश प्राय मरुभूमि होनेके कारण अन्नकी उपज और आमदके लिये बड़ा कष्टप्रद है। तो भी कुछ काल पूर्व वहा अन्नका भाव आजकलके सुकालसे कई गुना अच्छा था। राजपूतानेमें चूरू शहर मरूभूमिका एक तरह केन्द्रस्थल है। वहीकी एक पुरानी बही जो मेरे देखनेमें आयी है। उसमें विक्रम सम्वत् १८४४ और १८५६ के दर दाम पाये जाते हैं। उनसे जाना जाता है कि, ४२ भरो वजनके सेरसे रुपयेका तीन मन ३६ सेर तक बाजरा, ४॥ मन मूग, ५ मन मोठ और ८ सेर घी बिकता था।

जब अन्नकी ऐसी प्रचुरता हो तब कष्ट किस बातका ? जब अल्प परिश्रमसे ही पेटका गुजारा चल सकता हो तब वृथा सांसारिक बातें व्यापारके टेढ़े-मेढ़े दाव पेचमें सिरपच्ची और छलफरेब धोखेबाजी करनेकी बहुत कम लोगोंको ही सूझती है। इसीसे भारतवासी बड़े योग्य, सात्विक, सत्यनिष्ठ और सन्तोषी समझे जाते थे। किन्तु अपने मुंह ऐसा कहना, मानो अपनी बड़ाई आप ही करना है ; इस लिये एक विदेशीके मुखसे निकले शब्द ही लिखे जाते हैं।

अङ्गरेज जब पहले पहल भारतके सूरत बन्दरमें आये थे, वे भारतवासियोंकी योग्यता और सात्विकता देखकर दङ्ग हो गये थे। परन्तु अङ्गरेजोंके संसर्गसे भारतवासियोंको तङ्ग और विरक्त होना पड़ता था उस समयकी अवस्थापर टेरी नामक एक स्पष्टवक्ता अङ्गरेज महोदयने लिखा है "अगरेजोंके आचरणसे यहांके निवासी तङ्ग हो उठे हैं। अवसर पड़नेपर वह कहते हैं 'कृस्तान धर्म्म, भूतोंका धर्म्म है, कृस्तान बड़े शराबी, बड़े झूठे, बड़े झगडालू होते हैं और गाली गलौज करते हैं।' इसके विपरीत यहांके निवासी बड़े योग्य और बातके बड़े धनी हैं, यदि किसी देशी दूकानदारसे उसके बताये भावसे कम भावमें कोई सौदा मांगा जाता है तो वह झट कह उठता है कि, 'क्या तुमने मुझे कृस्तान समझ लिया है जो मैं तुम्हें ठगूंगा ?'"*

* The English in Western India by P. Anderson p. 26 (Edition of 1854)

सज्जनों! इस दृष्टान्तसे दो बातें सिद्ध होती है। एक उस समयके भारतवासियोंकी योग्यता और सत्यप्रियता। दूसरी योग्यता और सत्यताका प्रधान अवलम्ब व्यापारमें उन्नति प्राप्त करना है। जब हमारे हाथमें व्यापारकी लगाम थी, हम कमाते थे, घरमें धन सञ्चित था, उस समय हम सभी बातोंमें योग्य थे। आज अङ्गरेजोंके हाथमें व्यापारकी लगाम है, पास खूब धन हो गया है, तो आज सभी बातोंमें अङ्गरेज लोग ही योग्य समझे जाते हैं। हमारे हाथमें क्षुद्र व्यवसाय रह गया है। लाभ बहुत कम होता है। घरमें दारिद्र देव विराजने लगे हैं। इसीसे आज सभी बातोंमें हमारी योग्यता जाती रही है। छल कपट झूठ सच बोलकर किसी तरह दो पैसे प्राप्त करनेकी ही हमें चिन्ता लगी रहती है। अङ्गरेज जब इस देशमें आये थे; उनकी अवस्था भी अत्यन्त मन्द थी। उन्हें भी विदेशमें आकर वैसे आचरणसे दो पैसे बचानेकी चेष्टा रहती थी। इस उदाहरणसे छल कपट आदिका समर्थन नहीं किया जा रहा है। केवल दिखलाया जाता है कि, दरिद्र जातिके सद्गुणोंका नाश हो ही जाता है। एक कविने ठीक ही कहा है 'दारिद्र्य दोषो गुणराशिनाशी'। यदि हमें पुनः अपनी योग्यता प्राप्त करनी है तो योग्यताका प्रधान अवलम्ब धन उपार्जन करना होगा। पर धन आवे कहांसे? व्यापारसे—उच्च व्यापारसे। "व्यापारे वसते लक्ष्मीः।"

ऊपर अन्नका भाव दिखाया जा चुका है। उससे अनुमान किया जा सकता है कि, जहां रुपयमें एक साथ कई मन अन्न

आता हो, जहा एक रुपयेका अन्न एक दरजन आदमियोंके विना ढोकर लाना भी कष्टकर विदित होता हो उसका व्यापार कैसे लाभकारी हो सकता था ? उसे लादकर इधर उधर ले जानेमें मुनाफेसे अधिक तो मजूरी लग जाना ही सम्भव था। सभी जगह वहाकी आवश्यकनुसार अन्न उपजता था इस लिये उसका ग्राहक ही कौन था ?

सभी जानते हैं, सस्ते भावमें जहा माल मिले वहा खरीदना और जहा महगे भाव बिक सके वहा बेचना ही व्यापारका साधारण और पुराना तरीका है। एक स्थानपर बैठे रहकर विक्रेताकी गरजपर माल खरीदना और खरीदारकी गरजहो तब बेचना वा तेजी मन्दीकी रुखके अनुसार खरीद बिक्री करनेको व्यापारका एक अंश वा दूकानदारी कहते हैं। आगे अन्नका व्यवसाय स्थानीय छोटे छोटे दूकानदार किया करते थे। बडे बडे व्यापारियोंकी अभिलाषा उससे पूर्ण नहीं हो सकती थी, उनके व्यापारकी सामग्री तो अधिक तर विलासकी चीजें थीं। राजा महाराज अमीर उमराव ठाकुर सरदार धनी शौकीनोंके भोग विलासके पदार्थ और वस्त्र दूर दूरके प्रसिद्ध स्थानोंसे और रसना वासनाके चर परे मसाले सुदूरवर्त्ती जावा सुमात्र पिनाङ्ग सिंघापुर आदि द्वीप द्वीपान्तरोंसे लाये वा मंगाये जाते थे और मुहमागे भावपर बेचकर वणिक अच्छा लाभ उठाते थे। दृष्टान्तस्वरूप कुछ प्रमाण नीचे दिये जाते हैं।

ईस्ट इण्डिया कम्पनीके जहाज आरम्भमें जब यात्रा करने

लगे थे तब यह जावा सुमात्रा आदि प्राच्यदेशोंसे मिर्च लौंग दालचीनी जावित्री जायफल आदि मसाले ही भर ले जाते थे। मसालोंकी बिक्रीसे लाभ भी खूब होता था। सात आठ आने सेर खरीदी हुई मिर्च विलायतमें छ आठ रुपये सेर तक बेची जाती थी। विलायत ही क्यों? भारतके राजपूतानाके चूरूशहरमें विक्रम सम्वत १८४४में ४२ भरके वजनसे १॥) रु० सेर मिर्च और १०) रु० सेर लौंग बिकती थी जो ८० भरके वर्त्तमान राष्ट्र तौलसे ३) रु० सेर मिर्च और २०) रु० सेर लौंग ठहरती है।

आगे भिन्न भिन्न स्थानोंपर भिन्न भिन्न प्रकारके तौल रहते थे। आजकल राष्ट्रीयताके जमानेमें यह चाल बहुत बुरी जान पड़ती है। आजकल राष्ट्रभाषा राष्ट्रलिपि राष्ट्रसिक्का राष्ट्र तौल आदि सभी बातोंमें राष्ट्रीयता प्रिय लगती है। किन्तु तौलकी यह भिन्नता उस समयके अनुकूल थी। व्यापार नीतिका एक अङ्ग था। तौलके फेरफारको साधारण लोग नहीं समझ सकते थे। केवल वणिक ही उसे समझते थे और उससे लाभ उठाते थे।

मसालोंके व्यवसायकी आगे इतनी प्रधानता थी जितनी अब नित्य व्यवहार्यके कपड़े और अन्नके व्यवसायकी है। आज कल जिस प्रकार पंसारीकी दूकान छोटे छोटे साधारण लोग करते हैं आगे ठीक उसी प्रकार स्थानीय उत्पन्न अन्न और कपड़ेकी दूकान साधारण लोगही करते थे बड़े धनी लोगोंकी पसारीकी दूकान होती थी। यद्यपि आजकल पंसारीकी दूकान

एक छोटा व्यवसाय समझा जाता है किन्तु मसाले किरानेके काम करनेवाले बड़े बड़े व्यवसायी अब भी हैं। जावा सुमात्रा पिनाङ्ग सिंहापुर आदि द्वीपोंमें जिनकी निज की कोठियां हैं और उनके द्वारा माल मंगाया व भेजा जाता है, उन्हें अब भी अच्छा लाभ होता है। बहुतसे नाखुदे व्यवसायी इसीसे धनशाली हो गये हैं। पर अफसोस है कि, हमारे मारवाड़ी भाईयोंका ध्यान अब देश विदेशोंमें जाकर व्यापार करनेकी ओर नहीं रहा।

आगे मसालोंके सिवाय नीचे लिखी विलासकी चीजोंका व्यापार भी बड़ी उन्नतिपर था—काश्मीरी शाल दुशाले, बढ़िया मलीदे, लखनऊ फर्रुखाबादी चिकन, पक्की छींट आदि, मिर्जापुरी गलीचे, बनारसी कमख्वाब जरी गोटा खिलौने आदि, बरहज बलियेकी चीनी, भागलपुर मुर्शिदाबादी गरद बाफते, ढाकाई मलमल, राधा नगरी डोरिये, आगरेकी दरी और कांगनीका गोटा, अजमेरी जयपुरी रङ्गत छपाई* भावनगरी गाढे समरू, नासिक पूने सितारेके बर्तन, काबुली अनार सेव पिस्ते बादाम किशमिश आदि मेवे, प्रभृति देश विदेश सभी स्थानोंमें बिकते और बेचे जाते थे। इसके सिवाय बीमा और शराफीका व्यवसाय भी धनी लोगोंके यहां होता था।

किसी किसी प्रान्तका अन्न भी किसी प्रान्तमें शौककी सामग्री समझा जाता था। जैसे बङ्गालका चावल पञ्जाब राजपूताना आदिमें त्योहार उत्सवोंपर खाया, माथेपर लगाया और देवताओंपर चढ़ाया जाता था, इस लिये वहां तक ले जानेसे उसके व्यवसायमें भी अच्छा लाभ होता था। बङ्गालमें रुपयेके

कई चावल विकते थे, किन्तु चूरूमें ८० के तौलसे चार पांच रुपयों में मनभर महीन और २॥)रुपयेमें मनभर साठी चावलकी विक्री पायी जाती है।

पञ्जाव दिल्ली आदिमें भी वङ्गालके भावको देखते हुए वहुत तेज भावमें चावलका विकाना पाया जाता है। आइने अकवरीमें मुशकिन धान, सुखदास, दूनाप्रसाद, देवजीरा, शक्कर चीनी, जिनजिन जिरही, साठी आदि चावलके नाम पाये जाते हैं। उनके भाव क्रमसे ११० दामसे २० दाम तक लिखे हैं। जो २॥) रु० मनसे आठ आने मन तक होते है।

आगे चीन आदि दूर देशोंसे भी व्यापारका वहुत सम्बन्ध था। चीनमें यहांसे अफीम वहुत जाती थी और वदलेमें चांदी, सोना, रेशम आदि आता था। कुछ समय पहले हमारे मारवाड़ी भाइयोंको भी वहां कई दूकानें थीं*।

---

* चीनमें मारवाड़ियोंकी चार दूकानें विक्रम सम्वत् उनीसवें के आरम्भमें थी। यह बात वहुत लोगोंके मुंहसे सुननेमें आती है। पर उनके नाम आदि विशेष वृत्तान्त नहीं मिल सके। सम्भवतः एकका नाम हरगोविन्द गुलावराय था। दूसरीका अनंतराम शिवप्रसाद। सम्भवतः दूसरीके मुनीम कलकत्तेमें धरमचन्द केजड़ीवाल थे। धरमचन्द मुनीमका नाम बड़ा प्रसिद्ध था। ये बड़े भारी सटोरिये थे। इसीसे यहां एक कहावत पड़ गई थी। 'आजके भाव यह हैं, कलकी धरमचन्द जानें'। शायद धरमचन्दके मालिकोंका काम सम्वत् १९१७।१८ में विगड़ा। मेरे पिता श्रीयुक्त सेदूमलजी गोयेनका से पता लगता है कि तीसरी दूकानका नाम जोहरीमल रामलाल और चौथीका श्रीराम नानकराम था। सम्भवतः सम्वत् १९३० में चौथी दूकानका काम चीनसे उठा दिया गया इनकी दूकान इस समय कलकत्तेमें टेकचन्दराय रामकुमारके नामसे वर्तमान है।

मुनीम गुमाश्ते होकर कितने ही मारवाड़ी जाया करते थे। चीनके सिवाय अदनमें * भी व्यवसायके लिये मारवाड़ी जा बसे थे। पर अब वह बातें नहीं रहीं। मारवाड़ियोंकी वह दूकानें भी उठ गयीं और उनकी यातायात भी बन्द हो गयी। चीनमें अफीम आजकल भी जाती है, पर उसके लाभका अधिकांश सरकार पाती है। उस समय वह लाभ यहांके वणिकोंके घर आता था।

ऊपर लिखे उदाहरणोंसे आपलोग पहले समयके व्यापार, उसकी सामग्री उसके तरीके, उसके लाभ आदिका कुछ कुछ अनुभव कर सके होंगे; तथा यह भी समझ गये होंगे कि उस समय व्यापारका क्रम बहुत सीधा था और व्यक्तिगत व्यापारकी प्रथा ही अधिक थी। जो जितना कष्ट उठाकर एक स्थानमें बनने वा पैदा होनेवाले पदार्थोंको दूसरे सुदूर स्थानोंमें लेजाकर बेचा करता था वह उतना ही अधिक लाभ पाता था। पर आजकल व्यापारका वह पुराना क्रम बिलकुल उलट गया है सभी बातोंमें जमीन आसमानकासा अन्तर दिखायी देता है।

पहले शौकीनोंकी चीजोंहीने व्यापारमें प्रधानता पायी थी। अब नित्य व्यवहारी उदर भरनेके अन्न और शीतोष्ण निवारी कपड़ोंने प्रधानता पायी है। वाणिज्यमें शौकीनीकी चीजोंकी अब प्रधानता घट जानेका कारण यह नहीं है कि शौकीन

* श्रीयुक्त रंगलाल पोद्दारसे मालूम हुआ कि उनकी ससुरालका एक घराना अदनमें जा बसा था।

लोगोंकी कमी हो गयी है। आगे तो धनी और बड़े लोग ही शौकीनीके पदार्थ खरीदा करते थे पर अब तो जिसे खानेको अन्नतक नहीं मिलता उसे भी शौकीनीकी चीजोंके बिना कल नहीं पड़ती। घरमें टोटा हो खानेको अन्न न हो हाय हाय लगी हो तो बलासे, पर दो सुफेद कपड़े, कुत्तोंकी गलपटियाकी शकलको गलेमें बनावटी कालर सिरपर टेढ़ी टोपी, मुंहमें सिगरेट शरीर धोनेको साबुन लगानेको तीव्रगन्धी तेल फुलेल इत्र लवेण्डर, खानेको बरफ पीनेको सोडा, लेमोनेड जरूर चाहिये। इससे जान पड़ता है कि शौकीनीकी चीजोंका व्यवसाय घटा वा उठा नहीं, वरन् एक दूसरी शकलमें भयानक रूपसे बढ़ा है। पर नित्य व्यवहारी पदार्थोंके नवीन व्यापारने सबको नीचा दिखा दिया है। अस्तु।

पहले व्यक्तिगत व्यवसायकी प्रथा थी अब जन साधारणको मिलाकर लिमिटेड कम्पनी और कोआपरेटी समिति द्वारा व्यवसाय करनेकी प्रथा चली है। पहले एक ही व्यापारी बहुत सी चीजोंका व्यवसाय कर लेता था, एक पसारीकी दूकानमें पट्टवस्त्र मसाले आदिसे लेकर तेल नोन लकड़ीतक सब चीजें पायी जाती थीं। अब उसके बदले एक चीजके व्यवसायको अनेक व्यापारी मिलकर करते हैं। एक एक चीजको बहुत अधिक मात्रासे बनाने उपजाने सुधारने बेचनेके लिये बड़े बड़े कलकारखानोंकी रचना होती है।

पहले दूरवर्ती देश विदेशोंमें व्यापार करनेसे लाभ निश्चित था किन्तु अब शीघ्र और सस्ते भाड़ेमें मालको स्थानान्तरित

करनेवाले जहाज और रेलोंने दूरगामी व्यापारका पोल चौड़े कर दिया है। उसका निश्चित लाभ खो दिया है। इस समय तो देश विदेशोंमें प्राय सर्वत्र साधारणसे फर्क वा समान भावपर माल बिकता है। समान ही नहीं, कभी कभी उलटे भाव, उपजकी जगह महगा और बिक्रीकी जगह सस्ता बिकता है। "बगियामें बारह आम, सट्टीमें अठारह आम" कहावत् ठीक चरितार्थ हो जाती है। अब तो केवल अधिक मानासे किसी वस्तुका व्यापार करना वा बाजारके रुखके अनुसार खरीद वा बिक्री करना ही व्यापारका सिद्धान्त सा हो गया है।

पहले व्यापारके साधारण नियमानुसार माल पहले खरीद कर फिर बेचा जाता था। किन्तु अब उस साधारण नियमके विरुद्ध माल मत्येधर अर्थात् पहले बेचकर पीछे भी खरीदा जाता है। इस तरहके व्यापारका एक नया नाम फाटका (स्पेकुलेशन) प्रसिद्ध हुआ है।

पहले असली और सची चीजें ही बनायी और बेची जाती थी। अब असलीके सदृश दिखाऊ नकली और झूठी चीजें भी बनायी और बेची जाती है। नये शौकीनोंकी शौक बुझाने लिये एक रुपयेकी असली चीजके बदले उसके शकलकी नकली चीज एक पैसेमें दी जाती है।

पहले व्यापार सबको आराम पहुचाने, देशकी धन सम्पत्ति बढानेके महत् उद्देश्यसे होता था। किन्तु अब चिट्ठी डालने [लाटरी] मुफ्तमें घड़ियाल आदि देनेके, बहुतसे व्यापार ऐसी नीति और चालाकीसे किये जाते हैं, जिनका भेद न समझनेके

कारण साधारण लोग अपना लाभ समझ धोखा खाते हैं और उन व्यापारी रूपधारी धूर्त्तोंकी खूब बन आती है।

व्यापारकी तीन और रीतियां निकली हैं—(१) इजारा [मानोपोली] (२) वाणिज्य-सभा [चेम्बर आफ कामर्स] (३) राज-सहाय-नीति [बौंटी सिस्टम]

किसी चीजके व्यापारको अपनी मुट्ठीमें करलेना या इजारा ले लेना जिसे अङ्गरेजीमें मानोपोली कहते हैं। इस इजारेके लिये खाने पहिननेके घर घर व्यापी पदार्थ भी अब समस्त देश वा दुनिया भरसे खरीदकर फिर मुंह मांगे दामों बेचे जाते हैं।

वाणिज्य सभा, जिसे अङ्गरेजीमें चेम्बर आफ कामर्स कहते हैं। उसके द्वारा देश विदेशोंके शिल्प वाणिज्यके वृत्तान्त संग्रह किये जाते हैं। उनकी दशाका अनुसन्धान किया जाता है। उनके विवरणका अपने सभासदोंमें प्रचार किया जाता है। वह किस प्रकार अपने अधिकारमें आ सकता है, इसका विचार किया जाता है। विचार कार्य्यमें परिणत करनेके लिये वाणिज्य सभा द्वारा वणिकोंको युक्ति बतलाई या सहायता की जाती है। देश विदेशोंकी वाणिज्य सभाओंसे सम्बन्ध जोड़े जाते हैं। देश विदेशोंके वाणिज्य-विषयक सन्धि सम्बन्ध स्थापन किये जाते हैं। और उन्हें कायम रखनेके लिये हर प्रकारकी चेष्टा और कार-रवाईकीजाती है। वाणिज्य सम्बन्धी झगड़े झमेले मिटाये जाते हैं। वणिकोंको न्यायालयोंकी तबाहीसे बचाया जाता है। वाणिज्य सम्बन्धी किसी कार्य्यके लिये आवश्यक होनेपर राजकीय सहायता ली जाती है या राजाको सहायता दी जाती है।

राज-सहाय-नीति (बौंटी सिस्टम) अर्थात् सरकारकी ओरसे किसी व्यवसाय विशेषमें सहायता मिलनी वा वाणिज्यमें राजकीय हस्तक्षेप—दावपेच इसी जमानेकी नीति है। आगे राजाका काम केवल किसान वणिकोंसे राजस्व अदाकर उसे राजव्यवस्था प्रजा और देश रक्षाके लिये खर्च करना था। किन्तु अब देशके शिल्प वाणिज्यको बढ़ाना घटाना उन्नत और अवनत करना भी राजनीतिका एक अङ्ग हो गया है। अपने राज्यके शिल्प वाणिज्यकी उन्नति और उसकी रक्षाके लिये विदेशी मालपर कर बैठाकर करके रुपयोंसे अपने राज्यके शिल्प वणिज्यको सहायता देना, और किसी देशके शिल्प वाणिज्यको नष्ट कर उसपर अपना अधिकार जमानेके लिये राजकोषसे वणिकोंको सहायता देना आदि सभी तरहकी चेष्टा अपने राज्यके कृषि शिल्पकी वृद्धिके लिये की जाती हैं। उसी सहायताके फलस्वरूप आज जर्मनीमें बननेवाली चीनी जर्मनीमें आठ दस रुपये मन पर भारतमें सात ही रुपये मन बेची जाती है।

समयने बड़ा ही विचित्र पलटा खाया है। सब उलट फेरके साथ आज कल एक समयकी बीमारी नयी उत्पन्न हुई है। चारों तरफ जिधर देखिये समयका अभाव और सङ्कोच दिखायी देता है। जिससे सुनिये उसीके मुखसे समयके अभावकी शिकायत सुननेमें आती है। समयकी कमीसे सब विकल हैं। सबका गला घुटता है। सिर घूमता, मन छटपटाता है। पर समय कहां? बहुत आंख पसार कर देखनेपर भी समय दिखायी नहीं देता। इसी समयके अभावने एक आदमीके द्वारा बहुतसे काम

करनेके द्वारको बन्द कर दिया है। आगे एक ही चित्रकार रङ्ग बनानेसे लेकर चित्रकारी घुटाई चिकनाई तक सब काम कर लेता था। एक ही लुहार कची धातुको गलाकर चांदी सोना लोहा निकाल उसके बरतन गहने औजार हरबे बना उन्हें बाजारमें बेच आने तकका काम कर लेता था। किन्तु समयकी कमी अब एक आदमीके द्वारा इतने कामोंका पड़ता नहीं लगने देती। अब तो रङ्ग बनाना, चित्र खेंचना, छापना, धातू गलाना, ढालना गढ़ना, आदि सभी काम अलग अलग बहुत अधिक मात्रासे करनेकी आवश्यकता हुई है। और उसे सुचारु रूपसे सम्पन्न करनेके लिये लिमिटेड कम्पनीकी रचना हुई है। इसी लिये आजकल कम्पनी व्यवसायका अधिक जोर है। व्यापारका सबसे अच्छा तरीका इस समय कम्पनी बनाना ही है। कम्पनीमें बहुतसे लोगोंकी पूंजी एकत्र करके एक बड़ी पूंजी बनायी जाती है और उसके द्वारा समयोपयोगी बड़े बड़े कल कारखाने कारबार बृहद्रूपमें किये जाते हैं। इसमें बहुत लोगोंका स्वार्थ जुट जानेके कारण काम चल निकलता है और अच्छा लाभ होने लगता है। लिमिटेड कम्पनी दो तरहकी होती है। एककी सीमा शेअर (हिस्से) तक रहती है। दूसरीकी ग्राटी तक। लिमिटेड कम्पनियोंमें शामिल होनेवालोंके लिये लाभका हिस्सा तो असीम रहता है किन्तु हानिका सीमाबद्ध रहता है। बखरेदारीकी साधारण कम्पनियोंमें शामिल होनेवालोंपर हानिका दायित्व बड़ा भारी रहता है। दस आदमियोंने मिलकर एक कम्पनीकी और उसमें दो लाखका घाटा हो गया तो पावनेदारोंकी इच्छा

हो तो वह उन दसमेंसे एकही से घाटेके सबके सब दो लाख अदा कर सकते हैं। किन्तु लिमिटेड कम्पनीके हिस्सेदारों पर वह दायित्व नहीं रहता। जिस कम्पनीकी लिमिट या सीमा हिस्से पर रहती है उसमें शामिल होनेवालोंको अपने हिस्सेके रुपये डूब जानेके सिवाय और कुछ दायित्व नहीं रहता और जिसकी सीमा गारण्टी पर रहती है उसमें शामिल होनेवालोंको उसकी नियत जिम्मावारीके सिवाय और दायित्व नहीं रहता। इसीलिये किसी काममें अधिक आदमियोंको शामिल करना हो तो लिमिटेड कम्पनी द्वारा ही काम चलानेमें सुभीता होता है वरन् यों कहिये कि बिना लिमिटेड कम्पनीके काम चल ही नहीं सकता।

लिमिटेड कम्पनियोंकी सृष्टि यूरोपियनोंसे हुई है इसलिये इसकी नीति भी वही लोग भली भांति जानते हैं और उससे लाभ उठाते हैं। उस नीतिके भली भांति न जाननेके कारण हमारे बहुतसे हिन्दुस्थानी भाई कम्पनियोंके काममें हाथ डालकर सफल नहीं होते। लिमिटेड कम्पनीकी नीतिके विषयमें लेखकने जो कुछ अल्प स्वल्प बातें देख सुन रखी हैं उन्हें यहां प्रकाश करनेकी इच्छा होती है। किन्तु उन्हें प्रकाश करनेसे विषयान्तर हो जायगा और लेख बढ़ जानेका भी भय है। इस लिये उस विषयमें संक्षेपसे दो चार बातें कह कर ही सन्तोष किया जायगा।

यूरोपियनोंमें जो लोग व्यापारी और अनुभवी होते हैं वेही लिमिटेड कम्पनीके काममें हाथ डालते हैं। किन्तु हमारे यहा प्रायः स्कूलसे निकलनेवाले नये खिलाड़ी ही उसमें हस्तक्षेप करते हैं। इसलिये वे कामयाब नहीं होते। इसके सिवाय

लम्बा चौड़ा प्रोस्पेक्टस निकालकर ही हमलोग हिस्से भर जानेकी अपेक्षा करने लगते हैं। और हिस्से न भरनेसे अपना उत्साह भङ्ग करते हैं और अपने देशी भाइयोंको यद्वातद्वा गालियां देनेमें ही इति कर्त्तव्यता समझते है। किन्तु यूरोपियन लोग केवल प्रोस्पेक्टस निकालकर ही निश्चिन्त नहीं होते। वे हिस्से बेचनेमें बड़ी नीति और बुद्धिमानीसे काम लेते हैं और जबतक काममें लाभ नहीं होता तबतक तो वे साधारण लोगोंके शामिल होनेकी आशा ही नहीं करते। क्योंकि इस संसारमें लाभ बड़ा प्रिय और हानि दुःखदायी है। साधारण जनोंको लाभजनक हिस्सा लेना तो बड़ा सहज मालूम होता है पर घाटा देना बड़ा ही कठिन वा मरणसे भी अधिक दुःखदायी प्रतीत होता है। किन्तु भगवानकी इस सृष्टिमें सब लोग एकसे नहीं होते। कोई कोई विशेष शक्तिशाली उत्पन्न होते हैं। ऐसे भी लोग होते हैं जो घाटा भी दृढ़ चित्तसे सहन कर सकते हैं। घाटा दृढ़चित्तसे सहनकर सकते हैं वही व्यापारके सच्चे अधिकारी होते हैं। वही सच्चे व्यापारी कहलाते हैं। वही मौका पड़नेपर व्यापारसे भारी लाभ उठाकर धनशाली हो जाते हैं। और वही बड़ी बड़ी कम्पनियोंके जन्मदाता होते हैं। हमारे हिन्दुस्थानी और मारवाड़ी भाइयोंमें भी वैसे साहसी व्यापारी बहुत हैं परन्तु वे इस जमानेकी कम्पनी व्यवस्थासे नितान्त अनभिज्ञ हैं। अस्तु। यह इस निबन्धका विषय नहीं हैं। यदि अवकाश मिला तो वर्त्तमान वाणिज्यपर एक निबन्ध लिखकर वे बातें आप सज्जनों-की सेवामें अर्पण की जायगी। आज तो हमारा सम्बन्ध केवल

वाणिज्यकी परिवर्त्तनशीलतासे ही है। वाणिज्यके परिवर्त्तनका जितना, अनुभव अनुसन्धान और अनुमान हो सका वह लिखनेकी चेष्टा की गयी।

जहां एक रुपयेमें कई मन अन्न आता था वहा अब एक मन अन्नके कई रुपये लगते हैं। जहां अन्न दूध घीसे गृहस्थके घर भरे रहते थे, वहां अब वही पण्य द्रव्य (व्यापारके पदार्थ) हो उठे हैं। जहां भारतीय कला कौशल कृषि शिल्प समस्त संसारको चकित करता था, वहा अब विदेशी कला कौशल कृषि शिल्प भारतवासियोंको चकित करता है। भारतवासियोंको शिल्प शिक्षा प्राप्तकरनेके लिये यूरोप जाना पड़ता है। जहा भारतीय पण्य द्रव्यने ही समस्त भूमण्डल पर अपना अधिकार जमा रखा था वहा, अब विदेशी पण्यद्रव्यने भारतके बाजार छा लिये हैं। जहा अपने आप कर्म कर शान्तिसे जीवन निर्वाह होता था। वहा अब बिना औरोंसे मिले मिलाये अहर्निश दौड़धूप किये गुजर नहीं हो सकता। सैंकड़ों हजारों वर्ष जो क्रम एकसा चल सकता था, वहा अब क्षण क्षणमें फेर बदल होने लगे हैं। कहातक कहूँ? जिधर देखिये उधर ही उलट फेरके कारण आकाश पातालकासा अन्तर दिखायी देता है इसीसे कहना पड़ता है वा यह कहनेका साहस हुआ है कि वाणिज्य जगतमें नवीन वाष्पीय यन्त्रके आविष्कार और विदेशियोंके संघर्षरूपी भूकम्प द्वारा वाणिज्यका पुराना क्रम तहस नहस होकर नवीन क्रमने सभी बातोंमें नयापन दिखलाया है और वह आज हमारे और आपके सामने मौजूद है। इति।